ओशो सुगंधा

सितम्बर 2022

पठनीय एवं श्रवणीय मासिक ई-पत्रिका

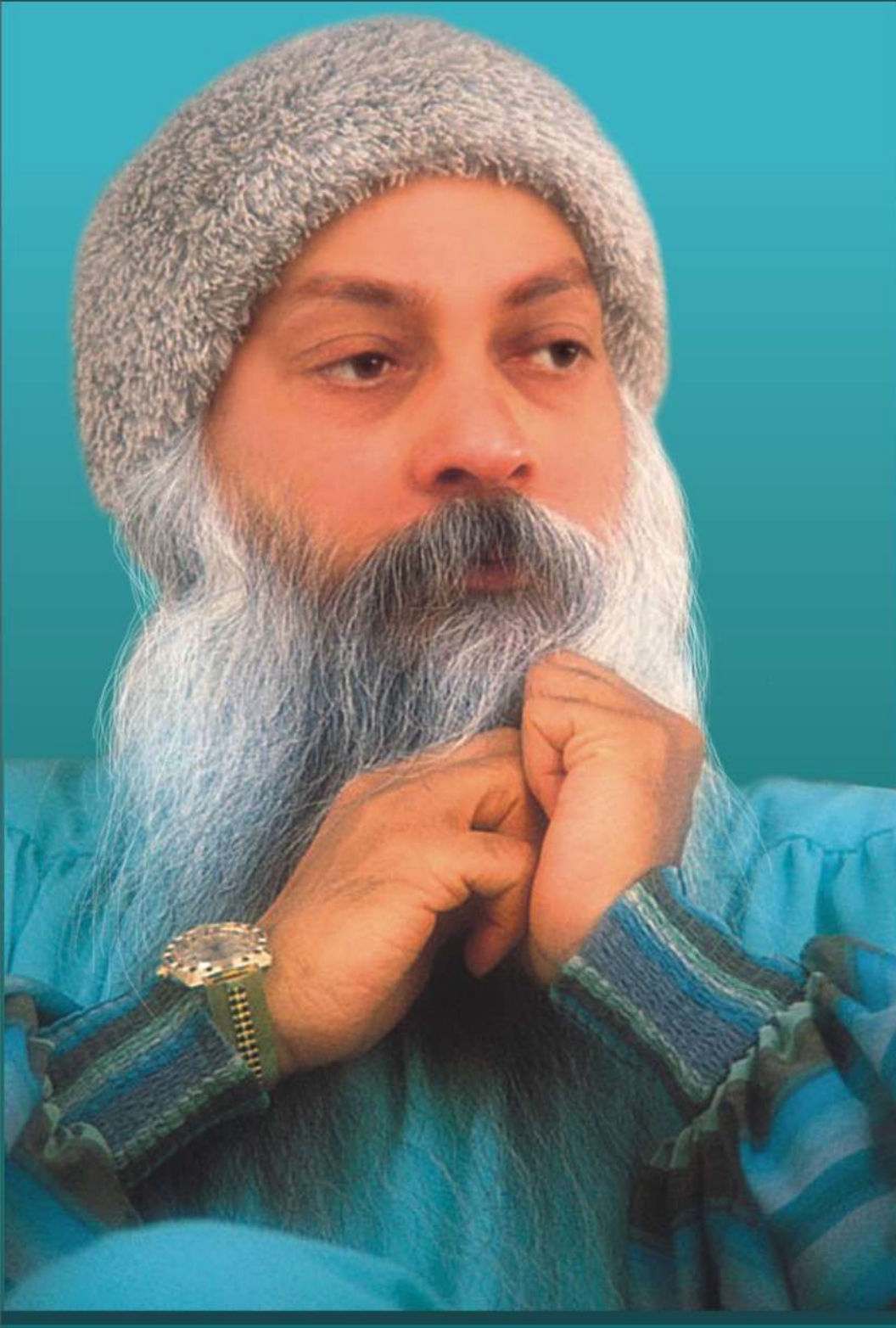

- शिक्षा का उचित केंद्र
- बच्चों की शिक्षा जरूरी है?
- माला ध्यान के लिए एक उपकरण है

ओशो सुगंधा

वर्ष–1/अंक–9 सितम्बर 2022

पठनीय एवं श्रवणीय मासिक ई–पत्रिका

परमगुरु ओशो के चरणों में समर्पित

प्रेरणास्त्रोत
स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती एवं माँ अमृत प्रिया

संपादन एवं संकलन
माँ मोक्ष संगीता

अन्य सहयोग
मस्तो बाबा

कला एवं साज सज्जा
आनंद संदेश

contact@oshofragrance.org

क्या आप ओशो सुगंधा नियमित प्राप्त करना चाहते हैं

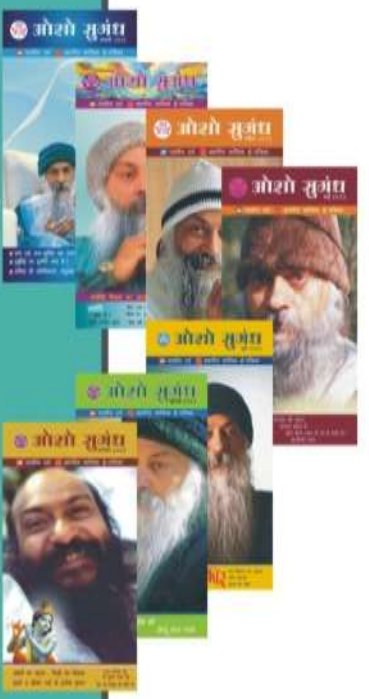

यह एक जीवंत पत्रिका है
सामने दिए गए चिह्न को स्पर्श करने से आपका संदेश हम तक पहूँच जाएगा और पत्रिकाएं नियमित रूप से आप तक भेजने के लिए आप का मोबाइल न. पंजीकृत हो जाएगा।

ओशो सुगंधा

पठनीय एवं श्रवणीय
मासिक ई-पत्रिका की

विशेषताएं

यह एक जीवंत पत्रिका है
नीचे दर्शाए गए चिह्न इस पत्रिका में
आपको विभिन्न जगह मिलेंगे, जिनके
स्पर्श मात्र से सक्रिय हो जाएंगे

ऑडियो

इस बटन को स्पर्श करते ही आप संगीत का ऑडियो सुन अथवा डाउनलोड कर सकते हैं

वीडियो

इस बटन को स्पर्श करते ही आप वह वीडियो देख

व्हाट्स ऐप

इस बटन को स्पर्श करते ही आप व्हाट्स ऐप पर सम्बंधित व्यक्ति को संदेश भेज सकते हैं

गुगल मैप

इस बटन को स्पर्श करते ही आपके फ़ोन पर उस

पुस्तक

इस बटन को स्पर्श करते ही आप PDF में पढ़ अथवा

वेब साइट

इस बटन को स्पर्श करते ही आप सीधे उस वेब

अनुक्रम

1. जीवन है–दुर्लभ अवसर ओशो प्रेम–पाति (ओशो द्वारा हस्तलिखित पत्र) 06
2. शिक्षा का उचित केंद्र 07
3. बच्चों की शिक्षा जरूरी है? 10
4. बच्चों की शिक्षा कैसी हो? 13
5. माला ध्यान के लिए एक उपकरण है 19
6. पेड़ की तरह महसूस करो और झूमो 21
7. शिक्षा में क्रांति – ओशो ओडियो प्रवचन 22
8. Insight into Sannyas Names 23
9. असंभव क्रांति – ओशो का ओशनिक साहित्य 24
10. संपूर्ण शिक्षा का लक्ष्य 25
11. आपके सवाल– स्वामी जी के जवाब (प्रश्नोत्तर) 29
12. स्वस्थ रहें, मस्त रहें 30
13. Ma & Swami Shailendra's Videos 31
14. हास्य–विनोद 32
15. जिंदगी का केंद्र क्या होना चाहिए? 33
16. म्यूजिक एलबम – ओशो ने हिमालय से पुकारा 36
17. जीवन के प्रति तीन दृष्टिकोण – सार गर्भित कहानी 37
18. ओशो के क्रांतिकारी विचार –क्वोरा पर 38
19. IS IT POSSIBLE TO BE INSIDE WITH YOU? 39
20. आगामी कार्यक्रम 41
21. समाचार 42
22. संपर्क सूत्र 44
23. पूर्व के संस्करण 45

ओशो द्वारा हस्तलिखित पत्र

जीवन है--दुर्लभ अवसर

-ओशो

इस अंक की शुरुआत ओशो द्वारा लिखित इस पत्र से करती हुं ताकि यह पत्र हमें याद दिलाये और हम इस जीवन रुपी अवसर को व्यर्थ न गवांए।

–संपादक

प्यारी रमा,

प्रेम। अवसर है जीवन, स्वयं को पाने के लिए।

अनंत यात्रा के बाद मिला हुआ।

दुर्लभ है--लेकिन खोया जा सकता है।

और साधारणतः खोया ही जाता है।

सावधान हो कि जो साधारणतः होता है, वह न हो।

समय है अल्प और पाना है समयातीत को।

शक्ति है सीमित और पाना है असीम को।

12-2-1971

-पद घुघरू बांध-29

(प्रतिः सौ. रमा पटेल, अहमदाबाद)

शिक्षा का उचित केंद्र

-ओशो

हमारी पूरी की पूरी शिक्षा किस केंद्र पर घूमती है, वह केंद्र ही गलत है। उस केंद्र के कारण सारी तकलीफ पैदा होती है। वह केंद्र है, एंबीशन। हमारी यह सारी शिक्षा एम्बिशन के केंद्र पर घूमती है, महत्वाकांक्षा के केंद्र पर घूमती है।

आपको क्या सिखाया जाता है?हमको क्या सिखाया जाता है?हमें सिखाई जाती है महत्वाकांक्षा। हमें सिखाई जाती है एक दौड़, कि आगे हो जाओ; दूसरों से आगे हो जाओ। छोटा सा बच्चा, के.जी. में पढ़ने जाता है, उसे भी, एक छोटे से बच्चे को भी हम एंग्जाइटी पैदा कर देते हैं--प्रथम होने की एंग्जाइटी! इससे बड़ी कोई एंग्जाइटी नहीं है, इससे बड़ी कोई चिंता नहीं है दुनिया में। दुनिया में एक ही चिंता है कि मैं दूसरे से आगे कैसे हो जाऊं, दूसरों को कैसे पीछे छोड़ दूं!

छोटा सा बच्चा है, छोटे से स्कूल में पढ़ने जाता है। उसके मन में भी हम चिंता का भूत सवार कर देते हैं, उसे भी आगे होना है। वह भी पुरस्कृत होगा, अगर आगे आएगा। अपमानित होगा अगर द्वितीय आएगा। अपमानित होगा, अगर असफल होगा। सफल होगा तो सम्मानित होगा। शिक्षक आदर करेंगे, घर में आदर मिलेगा। हम उसके भीतर प्रतियोगिता पैदा कर रहे हैं। और प्रतियोगिता एक तरह का ज्वर है, एक तरह का बुखार है। जरूर ज्वर में ताकत आ जाती है। अगर आप बुखार में हैं तो आप ज्यादा तेजी से दौड़ सकते हैं। अगर आप बुखार में हैं तो आप ज्यादा तेजी से गालियां बक सकते हैं। अगर आप बुखार में हैं तो आप ऐसी बातें कर सकते हैं जो कि आप सामान्यतया नहीं कर सकते। बुखार में, एक ज्वर में त्वरा आ जाती है, एक शक्ति आ जाती है।

इस सारी शिक्षा की दौड़ को हमने बुखार पर आधारित किया है। हम कहते हैं कि दूसरे से आगे निकलो। अहंकार को चोट लगती है बच्चों के। वे दूसरों से आगे होने के लिए उत्सुक हो जाते हैं। जब वे दूसरों से आगे होना चाहते हैं तो श्रम करते हैं, मेहनत करते हैं, अपनी सारी शक्ति लगा देते हैं, अपने पूरे प्राण जुटा देते हैं।

लेकिन किसलिए?इसलिए कि उन्हें दूसरों से आगे होना है। एक प्रतिस्पर्धा है, एक काम्पिटीशन है। फिर यह काम्पिटीशन का ज्वर उनको पकड़ जाता है। जब वे शिक्षा के जगत से बाहर आते हैं, पढ़–लिख कर बाहर निकलते हैं तब भी ये ज्वर उन्हें पकड़े रहता है। उन्हें दूसरे से बड़ा मकान बनाना है, उन्हें दूसरे से बड़ी दुकान खोलनी है, उन्हें दूसरे से बड़े पद पर पहुंचना है, छोटे क्लर्क को बड़ा क्लर्क होना है, अध्यापक को प्रधान अध्यापक होना है, डिप्टी मिनिस्टर को मिनिस्टर होना है, किसी को राष्ट्रपति होना है, किसी को कुछ होना है। एक पागलपन की दौड़ पकड़ती है। फिर जिंदगी भर प्रत्येक को कुछ न कुछ होने का पागलपन सवार रहता है। और इस पागलपन की दौड़ में उनके जीवन की सारी शांति, सारी शक्ति, सारा सामर्थ्य नष्ट हो जाता है।

आखिर में वे क्या पाते हैं?आखिर में वे कहीं भी नहीं पहुंचते। क्योंकि वे कहीं भी पहुंच जाएं, जहां भी पहुंच जाएंगे, हमेशा उनसे आगे उन्हें दिखाई पड़ेंगे। और जब तक उनके कोई भी आगे है तब तक उन्हें शांति नहीं मिल सकती। और इस दुनिया में अब तक कोई ऐसा आदमी नहीं हुआ जिसे ऐसा अनुभव हुआ हो कि मैं सबके आगे आ गया हूं, क्योंकि कुछ लोग हमेशा उससे आगे हैं। यह दुनिया बड़ी है और हम सब एक गोल घेरे में खड़े हैं। अगर हम एक गोल वृत्त में खड़े हो जाएं, तो कौन आगे है, कौन पीछे है?हरेक के हर कोई आगे है। और तब दौड़ चलती चली जाती है, दौड़ चलती चली जाती है। कभी कोई आदमी सबसे आगे आया है अब तक? आज तक कोई न कोई आगे आ जाता। हम जरूर चक्कर में खड़े हैं। एक सर्किल में घूम रहे हैं। उसमें कोई न कोई हमारे आगे है हमेशा। दुनिया में अब तक कोई आदमी आगे नहीं आ सका। लेकिन फिर भी हम बच्चों को सिखा रहे हैं कि तुम आगे आ जाओ। हम उनको पागलपन सिखा रहे हैं। हम एक ऐसी गलत बात सिखा रहे हैं कि उस दौड़ में वे पड़ जाएंगे। उस दौड़ में वे अपना जीवन नष्ट कर देंगे।

सारी शिक्षा ईर्ष्या पर खड़ी हुई है। हम लोगों से कहते हैं, ईर्ष्या मत करो, हिंसा मत करो, जलन मत करो, लेकिन हमारी पूरी शिक्षा ईर्ष्या पर खड़ी है। एक बच्चे को दिखा कर हम दूसरे बच्चे से कहते हैं देखो, यह कितना बुद्धिमान है और तुम कितने बुद्धिहीन हो। इस जैसे बनो। हम ईर्ष्या जगा रहे हैं, हम उसके भीतर जलन पैदा कर रहे हैं। उसे भी उसके जैसा होना है। उसे भी इसके आगे निकलना है।

हम उसके भीतर क्या पैदा कर रहे हैं? हम जहर डाल रहे हैं उसके भीतर ईर्ष्या का। जब भी हम किसी बच्चे से कहते हैं, दूसरे बच्चों से आगे हो जाओ तो हम जहर डाल रहे हैं; तो हम उस बच्चे को प्रेम नहीं करते। यह जहर जीवन भर उसकी नसों में घूमता रहेगा, उसके मन में घूमता रहेगा। यह हमेशा आगे होना चाहेगा। हमेशा एक आगे होने की दौड़ उसको पकड़े रहेगी। लेकिन बड़ा मजा यह है कि कभी कोई आगे हुआ है?और क्या किसी दूसरे से आगे होने में कोई आनंद मिल सकता है?आनंद से किसी के आगे खड़े होने का कौन सा वास्ता है? शांति का किसी के आगे खड़े होने से कौन सा संबंध है?नहीं, यह बुनियादी रूप से गलत बात है।

यह एंबीशन और उसके केंद्र पर घूमती हुई शिक्षा गलत है और अगर हमें एक नई दुनिया बनानी हो तो हमें इस केंद्र को बदलना होगा और कोई नया केंद्र पैदा करना होगा।

कौन सा नया केंद्र इसकी जगह हो सकता है?मैं आपसे कहना चाहता हूं, प्रतिस्पर्धा शिक्षा का केंद्र नहीं हो सकता; न होना चाहिए। शिक्षा का केंद्र प्रेम होना चाहिए।

प्रेम से मेरा क्या अर्थ है?हम यहां इतने लोग बैठे हैं, अगर हम सारे लोग संगीत सीखना चाहें, तो एक तो सीखने का रास्ता यह है कि हम दूसरों से आगे निकलने की कोशिश में, त्वरा में पड़ जाएं, तो हम संगीत सीख सकेंगे उस ज्वर में? दूसरे हमें पीछे न छोड़ दें, अपमानित न कर दें, हम कहीं बेइज्जत न हो जाएं, हमारा कहीं असम्मान न हो जाए, हम कहीं असफल सिद्ध न हो जाएं, कहीं हम दुनिया में नो–बडी सिद्ध न हो जाएं––समबडी हमें होना है, आगे होना है, किसी से कुछ होकर दिखलाना है––हम इस दौड़ में संगीत सीखेंगे! लेकिन क्या वह संगीत का प्रेम होगा, या कि अहंकार का प्रेम होगा?और जब अहंकार का प्रेम होगा तो संगीत कैसे सीखा जा सकता है?जहां अहंकार का प्रेम होगा वहां संगीत कैसे सीखा जा सकता है?

सीखने के लिए तो विनम्रता चाहिए। और यह शिक्षा पूरी की पूरी अहंकार सिखाती है, विनम्रता सिखाती नहीं। हालांकि शिक्षक नाराज है, वह कहता है विद्यार्थियों में विनम्रता नहीं है। विनम्रता उसमें कैसे हो सकती है? जब हम विद्यार्थियों को यह सिखाते हैं कि तुम दूसरों से आगे हो जाओ तो हम उसे अहंकार सिखाते हैं, इगो सिखाते हैं। तो उसमें विनम्रता कैसे हो सकती है?झूठी बात है। उसमें विनम्रता कभी नहीं हो सकती है, न होनी चाहिए। क्योंकि हम सिखा रहे हैं उसको अहंकार--दूसरों से आगे हो जाओ। जब वह दूसरों से आगे होता है तभी उसकी विनम्रता नष्ट हो जाती है और वह अहंकार से पीड़ित हो जाता है। फिर जब सारे लोग अहंकार से पीड़ित होकर लगेंगे, संगीत नहीं सीख सकते, दुनिया में कुछ भी नहीं सीख सकते।

सीखने का सूत्र है, विनम्रता, ह्युमिलिटी। सीखने का सूत्र है, निर-अहंकारिता। लेकिन इन सबके अहंकार तो उकसाए जा रहे हैं। इनके तो अहंकार को आग लगाई जा रही है कि तुम आगे निकलो, तुम्हें विश्वविद्यालय में स्वर्ण-पदक लाने हैं। तुम्हें भारतरत्न बनना है, किसी को राष्ट्रपति बनना है, किसी को कुछ बनना है। सारे लोगों के मन में ईर्ष्या की आग को जलाया जा रहा है, अहंकार को उत्तेजित किया जा रहा है। संगीत कैसे ये सीखेंगे, गणित कैसे ये सीखेंगे क्योंकि कुछ भी सीखने के लिए...जीवन का तत्व ये कैसे सीखेंगे? कुछ भी सीखने के लिए विनम्रता चाहिए। कुछ भी सीखने के लिए अप्रतियोगी, नॉन-एंबीशस माइंड चाहिए।

हां, सीखने का दूसरा सूत्र भी हो सकता है और वह सूत्र है, संगीत से प्रेम। संगीतज्ञ से प्रतिस्पर्धा नहीं, संगीत से प्रेम। निकट के विद्यार्थी से प्रतियोगिता नहीं, बल्कि जिस विषय को हम सीखना चाहते हैं उसके प्रति तल्लीनता, उसके प्रति आनंद, उसके प्रति प्रेम। उचित है कि हम गणित के प्रति प्रेम सिखाएं, दूसरे गणित सीखने वाले के प्रति प्रतियोगिता न सिखाएं। उचित है, हम संगीत के प्रति प्रेम को जन्माएं, दूसरे संगीत सीखने वाले के प्रति प्रतिस्पर्धा को न जन्माएं। जरूर संगीत सीखा जा सकता है संगीत के प्रेम के कारण। और तभी संगीत सीखा जा सकता है। और तभी सब कुछ सीखा जा सकता है, जब हम किसी चीज को प्रेम करते हैं, तभी सीखना संभव है। सब सीखना प्रेम का अनुसरण करना है। लेकिन प्रेम तो हमारे भीतर सिखाया नहीं जाता। हमारी शिक्षा का प्रेम से कोई संबंध नहीं है।

इसलिए अक्सर यह होता है कि अगर आपने साहित्य पढ़ा है विश्वविद्यालय में और विश्वविद्यालयों से निकलने के बाद आप फिर कभी साहित्य को उठाकर न देखेंगे, क्योंकि विश्वविद्यालय आपको साहित्य से इतना उबा देंगे, इतना बोर कर देंगे, इतना घबड़ा देंगे कि फिर साहित्य उठाकर देखने वाले नहीं हैं। अगर आपने विश्वविद्यालय में कविताएं पढ़ी हैं तो आपका जीवन भर के लिए कविता का प्रेम और आनंद नष्ट हो जाएगा। इसलिए नष्ट हो जाएगा कि वह अहंकार की दौड़ में पढ़ी गई थीं, परीक्षाएं पास करने के लिए पढ़ी गई थीं, आगे निकलने के लिए पढ़ी गई थीं। काव्य से कोई प्रेम पैदा नहीं हुआ था।

और इसलिए अक्सर यह होता है कि हमारी सारी शिक्षा प्रतिभा को नष्ट कर देती है।

– शिक्षा में क्रांति–9

बच्चों की शिक्षा जरूरी है?

-ओशो

प्रश्नः भगवान श्री, आत्मज्ञान की यात्रा में बुद्धि जब इतना बड़ा अवरोध खड़ा करती है, तो क्या बुद्धि को प्रशिक्षित करना और निखारना व्यर्थ ही नहीं है?
क्या ऐसा संभव नहीं है कि बच्चों की सरलता अबाधित रखने के लिए उनको बुद्धि का प्रशिक्षण दिए बिना, सीधा ही ध्यान में उतारा जाए?

विचारणीय है, महत्वपूर्ण भी। और प्रश्न सहज ही उठता है कि अगर बुद्धि इतना बड़ा अवरोध है, तो बुद्धि को प्रशिक्षित ही क्यों किया जाए? बच्चों को हम उनकी सरलता और भोलेपन में ही ध्यान क्यों न दे दें, बजाय विश्वविद्यालय भेजने के। उनका तर्क, उनका विचार नियोजित करने की बजाय, शिक्षित करने की बजाय, हम सीधा ही उन्हें ध्यान की सरलता और निर्दोषता में क्यों न डुबा दें? बुद्धि अगर बाधा है, तो बाधा को बढ़ाएं क्यों? बढ़ाने के पहले ही नष्ट क्यों न कर दें?

बुद्धि अगर सिर्फ बाधा ही होती, तो यह बात ठीक थी। बाधा सीढ़ी भी बन सकती है। रास्ते पर आप गए हैं और एक बड़ा पत्थर पड़ा है; वह बाधा है, अगर आप लौट आएं सोचकर कि रास्ता बंद है। अगर आप पत्थर पर चढ़ जाएं, तो एक नए रास्ते का उदगम होता है, जो नीचे रास्ते के तल से बिल्कुल भिन्न है। एक नए आयाम का उदगम होता है। जो नासमझ है, वह पत्थर को बाधा मानकर लौट आएगा। जो समझदार है, वह पत्थर को सीढ़ी बना लेगा।

और समझदारी, विजडम, जिसे हम बुद्धि कहते हैं, उससे बड़ी भिन्न बात है। बुद्धि के प्रशिक्षण के बिना बच्चे जंगली जानवरों की भांति रह जाएंगे, ज्ञानी नहीं हो जाएंगे। बुद्ध और महावीर और कृष्ण और क्राइस्ट नहीं हो जाएंगे, जंगली जानवरों की भांति रह जाएंगे। बाधा तो नहीं है उनके पास, लेकिन चढ़ने का कोई साधन भी नहीं है। बाधक पत्थर भी नहीं है, साधक सीढ़ी भी नहीं है।

इसलिए हर बच्चे को बौद्धिक प्रशिक्षण से गुजरना जरूरी है। और जितना सुघड़ यह प्रशिक्षण हो, जितना तीक्ष्ण यह प्रशिक्षण हो, यह बुद्धि का पत्थर जितना मजबूत और जितना विराट और बड़ा हो, उतना अच्छा है। क्योंकि वह उतनी ही बड़ी ऊंचाई पर खड़े होने का उपाय है। इस पत्थर के नीचे दबकर जो मर जाए, वह पंडित; इस पत्थर के ऊपर जो खड़ा हो जाए, वह ज्ञानी। इस पत्थर के पहले ही डर के कारण पत्थर के पास ही न आए, वह अज्ञानी।

अज्ञानी की बुद्धि प्रशिक्षित नहीं हुई। पंडित की बुद्धि प्रशिक्षित हुई, लेकिन वह बुद्धि के पार न हो सका। ज्ञानी की बुद्धि प्रशिक्षित भी हुई, वह बुद्धि के पार भी गया।

बचने से कुछ भी न होगा। पार जाना है। और जिस अनुभव से भी हम गुजरते हैं, वही अनुभव हमें सघन कर जाता है, सतेज कर जाता है।

बुद्ध या कृष्ण असाधारण रूप से बौद्धिक पुरुष हैं। मोहम्मद पढ़े-लिखे नहीं हैं, लेकिन बौद्धिक रूप से असाधारण पुरुष हैं। थोड़ा सोचो, मोहम्मद जैसे गैर पढ़े-लिखे आदमी ने कुरान जगत को दी और कुरान ने करीब-करीब एक तिहाई मनुष्यता को आंदोलित किया और प्रभावित किया। और कुरान का वचन मुसलमान के लिए आज भी जीवन का सूत्र है। यह आदमी गैर पढ़ा-लिखा भले रहा हो, इसकी बुद्धि की तीक्ष्णता अनूठी है। और इसने जो नियम बनाए, वे आज भी कारगर हैं और लाखों-करोड़ों हृदय उनसे आंदोलित, संचालित होते हैं। और इसने जिस ढंग से कुरान को व्यवस्था दी, उस ढंग की व्यवस्था न तो बाइबिल में है, न उपनिषद में है, न गीता में है। कुरान एक अर्थ में सर्वांगीण है। वह सिर्फ धर्म नहीं है,

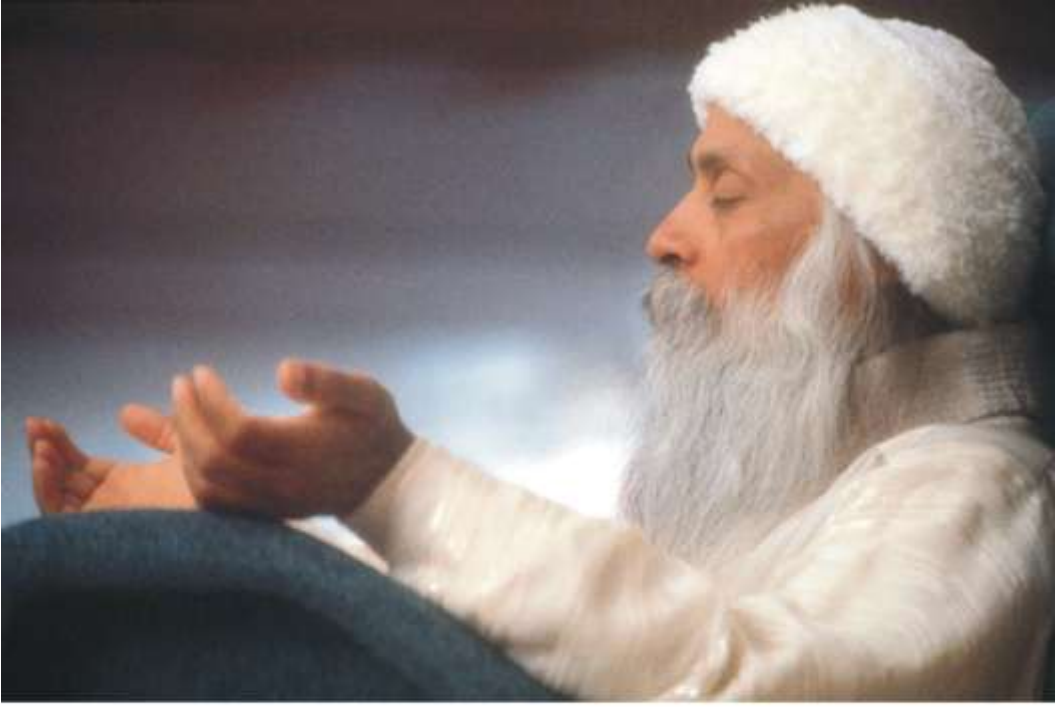

वह समाजशास्त्र भी है। वह सिर्फ समाजशास्त्र नहीं है, राजनीति भी है। मोहम्मद ने जीवन को सब तरफ से पूरा का पूरा अनुशासित करने की कोशिश की। जीवन की क्षुद्रता से लेकर ब्रह्म की विराटता तक सबको कुरान में समा लिया।

इसलिए कुरान इस्लाम के लिए अकेला शास्त्र काफी है। इसलिए मुसलमान कहते हैं, एक ही अल्लाह है और उस एक अल्लाह का एक ही पैगंबर है। एक पैगंबर काफी है। यह आदमी रहा तो बहुत बुद्धिमान होगा। इसकी बुद्धि में तो कोई शक नहीं कर सकता। बेपढ़ा-लिखा था, लेकिन बेपढ़े-लिखे होने से बुद्धि के होने न होने का कोई संबंध नहीं है। क्योंकि पढ़े-लिखों को हम देखते हैं और बुद्धि नहीं पाते। पढ़े-लिखे से बुद्धिमता का क्या संबंध है? बुद्धिमता तो जीवन के अनुभव से सार को निचोड़ लेने का नाम है।

तो बच्चे की बुद्धि तो प्रशिक्षित करनी होगी, उसके तर्क पर धार रखनी होगी, उसका तर्क तलवार जैसा हो जाए। फिर तलवार से वह खुद को काटेगा, आत्महत्या करेगा, या किसी के जीवन को बचाएगा--यह बुद्धिमता पर निर्भर है।

तर्क तो एक साधन है। उसका उपयोग हम जीवन को नष्ट करने में कर सकते हैं, विध्वंसक हो सकता है; सृजनात्मक कर सकते हैं, जीवन का निर्माण कर सकते हैं। पर एक बात निश्चित है कि अगर बच्चों को हम बुद्धि से वंचित रखें, तो वे बुद्धिमान नहीं हो जाएंगे। वे पशुओं की भांति भोले तो होंगे, लेकिन संतों की भांति ध्यानी नहीं होंगे।

बहुत बार ऐसा हुआ है कि कुछ बच्चों को जंगल के भेड़िए चुराकर ले गए। आज से कोई चालीस साल पहले कलकत्ते में दो बच्चियां पाई गईं, कलकत्ते के पास के जंगलों में। अभी कोई दस साल पहले लखनऊ के पास जंगल में एक बच्चा पाया गया, जो भेड़ियों ने पाला। वह बच्चा तो काफी बड़ा हो गया था। चौदह साल के करीब उसकी उम्र हो गई थी। उस बच्चे को कोई प्रशिक्षण नहीं मिला, कोई स्कूल नहीं जाना, किसी आदमी का साथ नहीं जाना। छोटा बच्चा था, झूले से उठाकर भेड़िए ले गए। और वह उनके साथ बड़ा हो गया। वह दो पैर पर भी खड़ा नहीं हो सकता था, क्योंकि यह भी शिक्षा का हिस्सा है।

तुम यह मत सोचना कि दो पैर पर तुम खड़े हो अपने आप। यह तुम्हें सिखाया गया है। आदमी का शरीर तो बना था चारों हाथ-पैर पर चलने के लिए। कोई बच्चा दो पैर पर चलता हुआ पैदा नहीं होता, चार ही हाथ-पैर पर चलता है। दो पर चलना तो सीखता है।

अगर तुम वैज्ञानिकों से, शरीर-शास्त्रियों से पूछो, तो वे बड़ी अनूठी बात कहते हैं। वे कहते हैं, आदमी का शरीर जानवरों जैसा स्वस्थ कभी भी नहीं हो सकता। क्योंकि आदमी का शरीर बना था चार हाथ-पैर पर चलने के लिए, उसने सब गड़बड़ कर लिया, वह दो से चल रहा है। इसलिए पूरा आयोजन बिगड़ गया है।

जो कार पहाड़ चढ़ने के लिए बनाई नहीं गई थी, वह पहाड़ चढ़ रही है। सारा ग्रेविटेशन का नियम बिगड़ गया है। क्योंकि जब आप चार हाथ-पैर से चलते हैं जमीन पर, तो आप संतुलित होते हैं, चारों हाथ पर बराबर बोझ होता है और ग्रेविटेशन और आपके बीच एक समानांतर रेखा होती है। आपकी रीढ़ और

जमीन की कशिश बराबर होती है, कोई अड़चन नहीं होती। जब आप दो पैरों पर खड़े हो जाते हैं, सब उपद्रव हो गया। खून को उलटा बहना पड़ता है सिर की तरफ। फेफड़ों को अनर्थक काम करना पड़ता है। पूरे वक्त कशिश से लड़ना पड़ता है। जमीन नीचे खींच रही हैं।

इसलिए अगर आदमी हृदय की दुर्बलता से मरता है, तो कुछ आश्चर्य नहीं है। कोई जानवर नहीं मरता हृदय की दुर्बलता से। हृदय की दुर्बलता जानवर में पैदा नहीं हो सकती, आदमी में होगी ही। जिनमें नहीं होती वह चमत्कार है, अन्यथा हृदय दुर्बल हो ही जाएगा। क्योंकि एक उलटा काम कर रहे हैं, पंपिंग करनी पड़ रही है पूरे वक्त, जो कि जरूरी है। प्रकृति ने वैसा बनाया नहीं था।

तो वह लड़का चल नहीं सकता था दो पैर से, वह चार से ही भागता था। और भागना भी उसका आदमियों जैसा नहीं था, भेडियों जैसा था। खाता भी कच्चा मांस था, जैसे भेड़िए खाते हैं। बड़ा शक्तिशाली था, आठ-आठ आदमी उसे पकड़कर भी बांध नहीं पाते थे। और भेडिया ही था वह बिल्कुल। लोंच दे, खा जाए, खूंख्वार!

ध्यानी संत तो वहां पैदा नहीं हुआ, एक जंगली जानवर पैदा हुआ। और ऐसी और घटनाएं पश्चिम में भी घटी हैं। बच्चे जंगल में पल गए हैं जानवरों के साथ, तो वे जानवरों जैसे पाए गए।

फिर इस बच्चे को सिखाने की कोशिश की गई छह महीने। हजारों तरह की मालिश और विद्युत की सेंक, बामुश्किल उसको खड़ा किया जा सका दो पैर पर। मगर जरा ही आप चूके कि वह फिर अपने चारों पैरों पर आ जाएगा, क्योंकि वह बड़ा कष्टपूर्ण है। वह तो आपको पता नहीं कि चार का मजा क्या है, तो आप दो पर खड़े हैं और कष्ट झेल रहे हैं।

उसका नाम राम रख दिया था। उसको सिखा-सिखाकर परेशान हो गए, मरने के पहले बस वह एक शब्द सीख पाया था, राम। नाम बता देता था। डेढ़ साल के भीतर वह मर गया। और जो वैज्ञानिक उसका अध्ययन कर रहे थे, उनका कहना है कि वह मर गया शिक्षण के कारण। क्योंकि वह जंगली जानवर जैसा बच्चा है।

इससे यह भी पता चलता है कि बच्चों को स्कूल भेजकर हम उनके जीवन का कितना हिस्सा नहीं मार देते होंगे। उनकी प्रफुल्ता तो मारते हैं, उनका जंगलीपन तो मारते ही हैं, वही तो उपद्रव है स्कूल में। तीस बच्चों को कक्षा में बिठा देते हैं एक शिक्षक के हाथ में, वे तीस जंगली जानवर। इनके हाथ में उन्हें सभ्य करने का काम पड़ा है। इसलिए शिक्षकों से ज्यादा उदास कोई व्यवसाय नहीं है। उनसे ज्यादा परेशान कोई आदमी नहीं है। तो उनका काम बड़ा मुश्किल का है।

लेकिन ये बच्चे शिक्षित करने ही होंगे, अन्यथा ये मनुष्य ही न हो पाएंगे। निर्दोष तो होंगे, लेकिन वह निर्दोषता अज्ञान की निर्दोषता होगी। न जानने से भी आदमी निर्दोष होता है। लेकिन जब जानकर कोई निर्दोष होता है, तब जीवन का फूल खिलता है।

बुद्धि का प्रशिक्षण जरूरी है, फिर बुद्धि का अतिक्रमण जरूरी है। और जो तुम्हारे पास ही नहीं है, उसे तुम खोओगे क्या?

इसलिए मैं निरंतर कहता हूं, इसके पहले कि तुम्हें बुद्ध और महावीर जैसी निर्धनता जाननी हो, तो बुद्ध और महावीर जैसा धन तुम्हें इकट्ठा करना पड़ेगा। वह निर्धनता तुम नहीं जान सकते, जो बुद्ध जानते हैं। उस निर्धनता का मजा तो राजमहल से बाहर निकलने में ही हो सकता है।

अगर कृष्ण जैसी चेतना जाननी हो, तो कृष्ण जैसी बुद्धि भी तलाशनी पड़े। क्योंकि जो तुम्हारे पास है, उसे ही छोड़ने का तुम मजा ले सकते हो। अगर आइंस्टीन बुद्धि का त्याग करे, तो जिस शांति को आइंस्टीन अनुभव करेगा, उसे तुम कैसे कर सकोगे? वह शांति बड़ी अनूठी होगी। क्योंकि वह तूफान के बाद की शांति होगी। तुम्हारा तूफान कभी आया ही नहीं। जैसे बीमारी के बाद स्वास्थ्य का जो शुद्ध स्वाद आता है, ऐसे ही बुद्धि के बड़े ऊहापोह के बाद, जब बुद्धि को कोई छिटकाकर अलग फेंक देता है, तब जो स्वाद आता है!

त्याग परम आनंद है इस अर्थ में कि त्याग के पहले वह जो भोग है, वह परम दुख है। बुद्धि के दुख से गुजरो, ताकि प्रज्ञा का आनंद तुम्हें उपलब्ध हो सके। संसार की व्यथा से गुजरो, ताकि परमात्मा की समाधि तुम्हें उपलब्ध हो सके।

विपरीत से जाना ही होगा, वही मार्ग है।

-ओशो, नहीं राम बिन ठांव, प्रवचन-9

बच्चों की शिक्षा कैसी हो?

-ओशो

प्रश्न:

भगवान, बच्चों की बुद्धि का प्रशिक्षण आपने अनिवार्य बताया।
लेकिन क्या ध्यान का प्रशिक्षण भी युगपत देना चाहिए?
बहुत से संन्यासी परिवार वाले हैं।
उनको अपने बच्चों के प्रति कौन-सी दृष्टि रखनी चाहिए?
जोर किस बात पर होना चाहिए, इस पर कृपया प्रकाश डालिए।

बच्चों को निश्चित ही तर्क में प्रशिक्षित करना है, गणित में प्रशिक्षित करना है। उनका मस्तिष्क साफ-सुथरा हो, प्रतिभाशाली हो, सक्षम हो। उनकी प्रतिभा बढ़े। बच्चों को पशुओं की भांति नहीं छोड़ देना है।

पशुओं के जीवन में कुछ है, लेकिन बहुत कुछ नहीं है। पशुओं के जीवन में एक भोलापन है, लेकिन भोलापन मूढ़ता का है, भोलापन संतत्व का नहीं। एक सरलता है, लेकिन सरलता मजबूरी की है, उपलब्धि की नहीं। पशु इसलिए सरल हैं कि चालाक नहीं हो सकते। संत इसलिए सरल नहीं है कि चालाक नहीं हो सकता है, चालाक हो सकता है, नहीं होता है। वह उसका अपना निर्णय है। और जो भी आपका अपना निर्णय है, वही आपके जीवन को आत्मा देता है। पशुओं के पास आत्मा है, लेकिन उस अर्थों में नहीं, जिस अर्थ में मनुष्य के पास आत्मा है। क्योंकि मनुष्य अपना निर्णय लेता है।

अगर आप चोर हो ही न सकें, तो आपके अचौर्य का क्या मूल्य है? अगर आप क्रोध कर ही न सकें, तो आपकी करुणा का क्या अर्थ है? विपरीत आप कर सकते हैं, फिर भी नहीं करते हैं। यह जो आपका अपना न करने का निर्णय है, यही आपकी आत्मा को निखारता है, धार देता है, तेजस्विता लाता है।

तो पशुओं जैसा भोलापन नहीं चाहिए, संतों जैसा भोलापन चाहिए।

बच्चे को प्रशिक्षित करना होगा, ताकि मनुष्य की सारी चालाकी को वह जाने। मनुष्य की सारी उपद्रव की जो दुनिया है, उससे परिचित हो, उस अनुभव से गुजरे। लेकिन अगर इतना ही किया गया, तो एक असंतुलित व्यक्तित्व पैदा होगा। तो बुद्धि तो प्रखर होगी, हृदय बिल्कुल सूना होगा। गणित तो साफ होगा, प्रेम बिल्कुल धुंधला होगा। मिटा तो सकेगा, लेकिन बना न सकेगा। जीत तो सकेगा, लेकिन हार न सकेगा।

और जो आदमी सिर्फ जीत सकता है, वह आदमी पूरा आदमी नहीं है। क्योंकि जीवन के कुछ आयाम हैं, जो हारे हुए को मिलते हैं। संसार तो, जो जीतता है, उसको मिलता है; परमात्मा उसको मिलता है, जो हारना भी जानता है। धन तो उसे मिलता है, जो जीतता है; प्रेम उसे मिलता है, जो हारता है। हार की भी अपनी विजय है।

लेकिन गणित और तर्क तो सिर्फ जीतना सिखाते हैं, हारना ध्यान सिखाता है। गणित और तर्क तो संसार में कैसे हम परिग्रह को बढ़ा लें, कैसे संपदा ज्यादा हो, साम्राज्य बड़ा हो, इसकी कला देते हैं। ध्यान, कैसे हमारी आत्मा का राज्य बड़ा हो, कैसे चेतना विस्तीर्ण हो जाए, सारे आकाश को छा ले, उसकी कला है।

अगर अकेला गणित और तर्क और बुद्धि ही बच्चों को सिखाई गई, तो वे बच्चे पंगु होंगे, पैरालाइज्ड होंगे, लकवा खाए हुए होंगे। जैसे उनका एक अंग तो चलता हो और दूसरा अंग न चलता हो। उनके जीवन में पूर्णता न होगी, वे समग्र न होंगे, उनका एक पैर सदा बंधा रहेगा, उनकी जिंदगी एक लंगड़ी दौड़ होगी। चूंकि और लोग भी लंगड़े हैं, इसलिए पता नहीं चलता। जैसे बच्चों का एक खेल होता है, लंगड़ी दौड़, जिसमें एक पैर दूसरे के एक पैर से बांध दिया जाता है, तो एक ही पैर से भागना पड़ता है। करीब-करीब हमारी जीवन की व्यवस्था ऐसी लंगड़ी दौड़ ही है, जिसमें हम एक पैर से भाग रहे हैं। फिर हार जाते हैं, टूट जाते हैं, मिट जाते हैं, तो आश्चर्य नहीं है।

ध्यान दूसरा चरण है। तो जैसे ही हम बच्चे को बुद्धि की शिक्षा दें, वैसे ही ध्यान की भी शिक्षा दें। जैसे-जैसे बच्चा विज्ञान को समझे, वैसे-वैसे धर्म को भी समझे। और जैसे-जैसे उसका मस्तिष्क निखरे, वैसे-वैसे उसके हृदय में भी प्रकाश आए। वह जाने ही नहीं, हो भी। उसके पास चीजें ही न बढ़ें, वह भी बढ़े। उसके बाहर का ही फैलाव न हो, भीतर की भी गहराई हो। जैसे वृक्ष उठते हैं आकाश की तरफ, लेकिन जड़ें चली जाती हैं भीतर की तरफ। और जितनी जड़ें गहरी जाती हों, उतना ही वृक्ष ऊपर आकाश की तरफ जाता है।

तुम ऐसे वृक्ष हो, जिसके पास जड़ें नहीं। तुम बस बाहर और ऊपर की तरफ जा रहे हो, भीतर और अंदर की तरफ जाने का तुम्हारे पास कोई उपाय नहीं। इसीलिए तुम प्रतिपल कंप रहे हो। जरा सा हवा का झोंका आता है कि तुम घबड़ा जाते हो; क्योंकि तुम्हारे पास जड़ें नहीं हैं।

तुम्हारे पास अगर जड़ें होतीं गहरी पाताल को छूतीं, तो तुम तूफानों को निमंत्रण देते। और जब तूफान आता, तब तुम्हारे आनंद का कोई ठिकाना न होता। तभी तुम्हारे उत्सव का क्षण होता, तब तुम नाचते। क्योंकि तूफान चुनौती देता है, और चुनौती की पृष्ठभूमि में ही तुम्हें अपने होने का पूरा-पूरा पता चलता है, उसके पहले पता नहीं चलता। तब तुम तूफान को धन्यवाद देते और कहते कि अक्सर आया करो।

अभी छोटा सा हवा का झोंका और तुम घबड़ाते हो कि मौत आ गई। तुम चिल्लाते हो कि हे भगवान, बचाओ। तुम भगवान को धन्यवाद नहीं देते कि तूने तूफान भेजा; तुम भगवान से कहते हो कि बचाओ; इस तूफान से छिपाओ। तुम डरे हो, क्योंकि तुम्हारे पास जड़ें नहीं। जड़ें भीतर की तरफ जाती हैं। जितनी जड़ें भीतर जाएंगी, उतना ही तुम्हारा बाहर का फैलाव सुदृढ़ हो जाएगा।

इसलिए ध्यान एक अर्थ में तो बुद्धि के विपरीत है, जैसे जड़ें एक अर्थ में वृक्ष के विपरीत हैं। वृक्ष ऊपर जाता है, जड़ें नीचे जाती हैं, दोनों की दिशा विपरीत है। इस अर्थ में ध्यान बुद्धि के विपरीत है, लेकिन एक अर्थ में जड़ों के ऊपर ही वृक्ष का सारा फैलाव खड़ा है। विपरीत नहीं हैं। ध्यान के ऊपर ही बुद्धि की सारी गरिमा निर्भर होती है।

इसलिए जो बुद्धि बुद्ध के पास है, वैसी बुद्धि आइंस्टीन के पास नहीं हो सकती। क्योंकि बुद्ध के पास बुद्धि का ऊपरी जाल ही नहीं है, भीतर जलता हुआ ध्यान का दीया भी है। उस भीतर ध्यान के दीए से बुद्धि आलोकित है। इसलिए बुद्धि जो भी कर सकती थी गलत, वह नहीं कर पाएगी। ध्यान का दीया उसे नियोजित रखेगा, ध्यान का दीया सदा मार्ग-दर्शन देगा। इसलिए बुद्धि भटक न पाएगी। ये घोड़े बुद्धि के कहीं भी भागकर किसी गड्ढे में नहीं गिरेंगे, भीतर सारथि बैठा हुआ है। वह प्रज्ञावान ध्यान भीतर का मालिक है।

बच्चे को बुद्धि भी दो, बच्चे को ध्यान भी दो। उसे जड़ें भी दो, आकाश में फैलाव भी दो। और यह ध्यान रखो कि दोनों के बीच संतुलन बड़ी बात है। कोई भी अंग ज्यादा न हो पाए, कोई भी अंग कम न हो पाए। अगर तुम ऐसा कर सको, तो ही तुमने ठीक अर्थों में माता का या पिता का कृत्य पूरा किया, तो ही तुम सही अर्थों में बच्चे को जन्म दिए। अन्यथा तुमने शरीर को जन्म दिया और आत्मा को तुमसे कोई सहारा न मिला। शरीर का जन्म तो बड़ी साधारण बात है। पशु-पक्षी भी उसे पूरा कर लेते हैं। उसमें तुम्हारी कुछ खूबी नहीं, कोई विशेषता नहीं।

और एक और बात ख्याल रख लेना कि जब तुम बच्चे की आत्मा को निखारते हो, तब तुम भी उसके साथ निखरते हो। क्योंकि यह असंभव है, दूसरे को निखारना और खुद निखरने से बच जाना असंभव है। अगर तुमने अपने बच्चे को प्रेम किया, उसे बुद्धि की यात्रा दी, उसे ध्यान की जड़ें दीं, तो तुम अचानक पाओगे कि उसे बनाने में तुम भी बनने लगे हो। जब मूर्तिकार एक मूर्ति को सुंदर बनाता है, तो सिर्फ मूर्ति ही सुंदर नहीं बनती, उसके बनते-बनते मूर्तिकार भी सुंदर होता जाता है। क्योंकि सौंदर्य को जन्म देना असंभव है बिना सुंदर हुए। संतुलन को जन्म देना असंभव है, बिना संतुलित हुए।

अगर तुम सच में पिता हो, तो तुम्हारे घर में एक बेटे का जन्म तुम्हारी पूरी जिंदगी को बदल देगा। क्योंकि अब तुम बेटे को सुंदर, स्वस्थ, शांत बनाने की चेष्टा करोगे, तो तुम कैसे अशांत रह पाओगे? तुम जो बेटे के लिए करोगे, उसके पहले तुम्हें अपने लिए करना होगा।

एक पति और पत्नी तब तक स्वच्छंद रह सकते हैं, जब तक एक बच्चे का जन्म नहीं हुआ। बच्चे के जन्म के साथ एक नई कड़ी पैदा हो गई। अब खिलवाड़ नहीं चल सकता। अब जिंदगी एक गहन दायित्व है। और दायित्व रसपूर्ण है, क्योंकि प्रेम से भरा है। यह बच्चा मां-बाप, दोनों को बदलना शुरू करेगा। अगर सच में तुम इसे प्रेम करते हो, तो तुम बदल जाओगे। अगर तुम इसे प्रेम नहीं करते हो, तो तुम चीख-पुकार मचाते रहोगे कि बच्चा बिगड़ रहा है, समाज खराब है, सब खराब हुआ जा रहा है।

बच्चा कभी भी समाज के कारण नहीं बिगड़ता, तुम्हारे कारण बिगड़ता है और तुम ही समाज हो। और बड़े मजे की बात है कि जिसको तुम समाज कहते हो, वह सभी के बच्चे हैं। लेकिन बाप वैसा ही बना रहता है, जैसा वह बच्चे के पैदा होने के पूर्व था। मां वैसी ही बनी रहती है, जैसे वह बच्चे के पैदा होने के पूर्व थी। तो यह बच्चा पैदा तो जरूर हो गया, लेकिन तुम्हारे हृदय में इसके लिए प्रेम नहीं है। तुम्हारा प्रेम पूरे समाज को बदल देगा।

इसे ठीक से गहरे में बैठ जाने दो कि तुम जो भी निर्माण करते हो, वह तुम्हें भी निर्मित करता है। निर्माता अपनी निर्मिति से मुक्त नहीं हो सकता। एक सुंदर कविता का जब जन्म होता है, तो उसके साथ एक सुंदर कवि का भी जन्म हो जाता है। और अगर ऐसा न हो तो समझना कि कविता उधार है, वह जन्मी नहीं है, बाजार से खरीद लाई गई है। इसलिए जब तुम्हें कोई कवि मिले और तुम पाओ कि उसकी कविता की सुगंध उसमें नहीं, तो समझना वह कविता उसकी रही ही न होगी।...

....अगर तुमने अपने बच्चे को सच में ही प्रेम किया है...। और प्रेम अपने बच्चे को परमात्मा बनाना चाहेगा, इसके अतिरिक्त प्रेम और क्या चाह सकता है? इससे छोटे पर प्रेम कभी राजी नहीं होता। प्रेम इससे कम पर राजी हो ही नहीं सकता। अगर तुम अपने बेटे को डॉक्टर बनाना चाहते हो, तो तुमने अभी प्रेम किया ही नहीं। अगर तुम अपने बेटे को एक बड़ा दुकानदार बनाना चाहते हो, तो तुमने प्रेम अभी जाना ही नहीं।

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि बेटे को दुकानदार मत बनाना और डॉक्टर मत बनाना; डॉक्टर भी बनना होगा, दुकानदार भी बनना होगा। लेकिन उतने पर मां की, पिता की आकांक्षा नहीं रुकेगी। वह बीच का पड़ाव हो सकता है, राह हो सकती है। लेकिन जहां भी प्रेम है, वहां परमात्मा से कम पर तृप्ति नहीं है। तुम जिसे प्रेम करोगे, उसे तुम परमात्मा की तरह, अंततः परमात्मा हो जाए, ऐसी आकांक्षा करोगे।

प्रेम परमात्मा को जन्म देने की कीमिया है। उससे कम पर जो राजी हो जाए, वह प्रेम नहीं। उसमें कुछ और होगा, संसार का सौदा होगा, व्यवसाय होगा, धन के प्रति महत्वाकांक्षा, कुछ और रस होंगे, लेकिन प्रेम नहीं है। और जब भी प्रेम होता है, तो परमात्मा को जन्म देने की संभावना पैदा होती है।

तुम बच्चे को ध्यान भी देना, बुद्धि भी देना और दोनों के बीच संतुलन भी देना। और उसको देते-देते ही तुम अनजाने पाओगे कि तुम बदलते गए हो। जिस दिन तुम्हारे बेटे की प्रतिमा पूरी निखरेगी, उसके पहले तुम निखर चुके होओगे। अचानक तुम पाओगे कि बेटे को बनाने में तुम बन गए हो। और अगर बेटा बिगड़ रहा है, तो उसका अर्थ है कि तुम बिगड़े हुए हो और तुम्हारा प्रेम इतना नहीं है कि तुम अपने को बदलने को राजी हो बेटे के लिए।

तो बड़े मजे की घटना घटती है। बाप वही किए चला जाता है, जो वह चाहता है कि बेटा न करे। मां वही किए चली जाती है, जो उसने सदा चाहा है कि उसकी बेटी न करे, उसका बेटा न करे। और बच्चे तुम्हारी शिक्षाओं से नहीं सीखते, तुमसे सीखते हैं। और बच्चों की आंखें बड़ी साफ और पैनी हैं। अभी उन पर धूल नहीं जमी जीवन की। तुम्हारे शब्दों के आर-पार देख लेते हैं। बच्चे तुम्हारे शब्दों के जाल में नहीं पड़ते। तुम क्या कह रहे हो, इसकी उन्हें फिक्र नहीं। वे तुम्हें देख लेते हैं, वे सीधा तुम्हें पहचान लेते हैं। उनकी पकड़ प्रत्यक्ष है।

इसलिए बच्चों से झूठ बोलना बहुत मुश्किल है। क्योंकि वह तुम्हारे...तुम जब झूठ बोलते हो, तब झूठ कोई बोला थोड़े ही जाता है सिर्फ, झूठ बोलते वक्त तुम्हारा पूरा चेहरा कहता है कि झूठ, तुम्हारी आंखें कहती हैं कि झूठ, तुम्हारा हाथ बच्चे को छू रहा है, वह कहता है कि झूठ। अभी बच्चा जिंदगी के बहुत करीब है, तुम न पकड़ पाओ, लेकिन बच्चा फौरन पहचान लेता है। तुम्हारी सारी तरंगें कहती हैं कि तुम झूठ बोल रहे हो। इसलिए बच्चों को धोखा देना मुश्किल है, जब तक कि तुम उनको इतना भ्रष्ट न कर दो।

हम सब कोशिश में लगते हैं उनको भ्रष्ट करने की। और जब तक वे भ्रष्ट न हो जाएं, तब तक हम संदिग्ध रहते हैं, तब तक डर रहता है। मां-बाप बच्चों को शिक्षा दे रहे हैं, झूठ मत बोलो। और बच्चे प्रतिपल पाते हैं कि मां-बाप झूठ बोल रहे हैं। इससे क्या शिक्षा मिलती है?सिर्फ एक शिक्षा मिलती है और वह यह कि तुम भी अपने बच्चों को समझाना कि झूठ मत बोलो और झूठ बोलना! यह तथ्य पकड़ में आ जाता है।

ये बच्चे भी अपने बच्चों को समझाएंगे कि झूठ मत बोलो और झूठ बोलेंगे। यही तुम्हारे पिता ने तुम्हारे साथ किया, यही तुम अपने बच्चों के साथ कर रहे हो। ये बच्चे देखते हैं कि इनको ब्रह्मचर्य का उपदेश दिया जाता है और मां-बाप अभी कामवासना से पूरी तरह भरपूर हैं। उनको दिखाई पड़ता है। तुम्हारा व्यवहार उनकी समझ में आता है। वे भी अपने बच्चों को ब्रह्मचर्य का उपदेश देंगे। एक बड़ा पाखंड है, जो चलता है।

हमारा समाज एक विराट पाखंड है। हमें दिखाई नहीं पड़ता, क्योंकि हम उसी में पैदा हुए हैं; जैसे मछलियों को सागर नहीं दिखाई पड़ता, क्योंकि वे उसी में पैदा हुई हैं। हमारा पाखंड इतना गहरा है कि अगर हमें दिखाई पड़ना शुरू हो जाए तो हम बहुत बेचैन हो जाएंगे, बहुत घबड़ा जाएंगे कि यह क्या हो रहा है? हम सोचते भी नहीं, हम क्या कह रहे हैं?क्या कर रहे हैं? क्या उसका परिणाम होगा?

तुम बच्चों को बुद्धि की शिक्षा देते हो, ध्यान की नहीं, क्योंकि बुद्धि के लिए उधार शिक्षक मिल जाते हैं, किराए के आदमी मिल जाते हैं। इसलिए आसान है। स्कूल है, विश्वविद्यालय है, वहां तुम भेज देते हो। अगर अधिक मां-बाप की आकांक्षा को ठीक से समझा जाए, तो शायद वे शिक्षा लेने नहीं भेजते, सिर्फ झंझट से बचने भेजते हैं। यह घर का उपद्रव टल जाता है। रविवार को घर में उपद्रव वापस लौट आता है।

स्कूल जो हैं, मां-बाप को बच्चों से बचाने के उपाय हैं, वहां तुम उन्हें ढकेल आते हो। वहां तुमने किराए के नौकर रख छोड़े हैं, जो उन बच्चों को उलझाए रखते हैं ऐसी बातों में, जिनमें निन्यानबे प्रतिशत बिल्कुल कचरा हैं, जिनको सिखाने की कोई जरूरत नहीं है, जिनको सीखकर सिवाय भूलने के बच्चे कुछ भी न करेंगे, जिनमें सार न के बराबर है। शिक्षक जो है, वह एक तरह का पहरेदार है, जो मां-बाप और बच्चों के बीच में डंडा लिए खड़ा रहता है। कम से कम पांच-सात घंटे के लिए तुम्हें शांति दे देता है।

कैसा यह प्रेम है, जो बच्चों के कारण अशांत होता हो? यह प्रेम नहीं है। ये बच्चे आकस्मिक घटनाएं हैं, जो तुम्हारे ऊपर पड़ गए हैं, दुर्घटनाएं हैं। इनको किसी तरह ढोना है।

और तुम उन्हें स्कूल क्यों भेज रहे हो? इसलिए नहीं कि इनकी आत्माएं निखर आएं। तुम इन्हें स्कूल भेज रहे हो, ताकि ये समाज का सारा पाखंड, यह व्यवस्था सीख जाएं। समाज का सारा जाल, गणित, चालाकी ये सीखकर वापस लौट आएं। ये निष्णात हो जाएं, ये समाज के सदस्य हो जाएं। तुम इनको तैयार कर रहे हो। तुम्हारी महत्वाकांक्षाएं अधूरी रह गई हैं। तुम करोड़ कमाना चाहते थे, नहीं कमा पाए, तुम्हारा बेटा इसे पूरी करेगा। तुम बेटे को तैयार कर रहे हो। और अगर बेटा परीक्षाओं में असफल होता है, तो तुम दुखी होते हो--इसलिए नहीं कि बेटा असफल हुआ; इसलिए कि तुम्हारी महत्वाकांक्षा डांवाडोल होती है। यह बेटा कैसे तुम्हारी महत्वाकांक्षा पूरी करेगा?

ये बच्चे तुम्हारी महत्वाकांक्षाओं का फैलाव हैं। ये तुम्हारी वासनाएं हैं। तुम इनके कंधे पर सवार होकर यात्रा करना चाहते हो। इसलिए बेटा अगर धन कमाकर घर लाए, तो बाप खुश होता है, छाती से लगाता है; बेटा अगर धन गंवाकर घर आए, तो कोई उसका स्वागत नहीं करता।

जीसस की एक बड़ी प्यारी कथा है, वह तुम समझो। जीसस निरंतर कहते थे। और चूंकि जीसस का सारा जोर प्रेम पर था, वह कहानी सूचक है। जीसस कहते थे, एक बाप के दो बेटे थे। बाप बड़ा धनी था। एक बेटा बाप का आज्ञाकारी था और एक बड़ा विद्रोही था। एक कमाई को बढ़ाता और एक कमाई को तोड़ता और घटाता।

अंततः इन दोनों बेटों को अलग कर देने के सिवाय कोई उपाय न रहा। आधा-आधा धन बांट दिया गया। बड़ा बेटा बाप के पास रुका, धन को उसने व्यवसाय में लगाया, खेत खरीदे, बगीचे बनाए। छोटा बेटा धन मिलते ही नदारद हो गया गांव से। थोड़े दिनों बाद खबरें आने लगीं कि जुए में उसने सब बरबाद कर दिया, शराब पी डाली, वेश्याओं के नाच-गान में वह जो मिला था, सब मिट्टी हो गया।

बाप ने खबर भेजी कि घर वापस लौट आओ। छोटा बेटा जो घर छोड़कर चला गया था, जुआरी था, शराबी था, उसे भरोसा न आया कि मेरे सब बरबाद कर देने पर भी बाप मुझे वापस बुला सकता है।

प्रेम भरोसे योग्य है भी नहीं। और जब कभी प्रेम घटता है, तुम्हें भी भरोसा न आएगा। चोरी घटे, भरोसा आता है। घृणा हो, भरोसा आता है। प्रेम ऐसा अनहोना है कि कहां दिखाई पड़ता है!

लड़के को भी भरोसा नहीं आया। लेकिन जार-जार था, दीन हो गया था, भीख मांगता था। सोचा, लौट चलूं! इस भीख से तो घर के एक कोने में पड़ा रहूंगा, वही ठीक है।

बेटे के आगमन की खबर आई तो बाप ने बड़ा उत्सव-समारोह मनाया। मिष्ठान्न और भोजन तैयार करवाए। सारे गांव को भोजन पर आमंत्रित किया।

बड़ा बेटा खेत से लौट रहा था, तब गांव के कुछ लोगों ने कहा कि हद्द हो गई, तुम्हारा दुर्भाग्य! तुम यहां घर में हो, बाप की सेवा करते हो, कमाते हो, मेहनत करते हो, लेकिन तुम्हारे स्वागत में कभी इस तरह कालीन नहीं बिछाए गए, और न तुम्हारे स्वागत में कभी बैंड-बाजे बजे, और न तुम्हारे स्वागत में कभी भोज-उत्सव हुआ। और वह आवारा लड़का, तुम्हारा छोटा भाई, वापस लौट रहा है सब बरबाद करके, और उसके स्वागत का इंतजाम हो रहा है। जाओ, तुम भी स्वागत में सम्मिलित हो जाओ। दीए जलाए गए हैं घी के, बैंड-बाजे बजते हैं, मेहमान इकट्ठे हैं। बाप गांव के द्वार पर आवारा बेटे की प्रतीक्षा कर रहा है। बड़े बेटे को भी दुख हुआ, चोट लगी। वह घर जाकर उदास बैठ गया।

और जब बाप बेटे को लेकर लौटा, नए छोटे बेटे को, जो भाग गया था, वापस लौटा, तो बड़े बेटे को उदास पाकर उसने पूछा कि तू उदास क्यों है? उस बड़े बेटे ने कहा, उदासी स्वाभाविक है। मेरा कभी कोई स्वागत नहीं होता और मैं तुम्हारी सेवा कर रहा हूं। मैं तुम्हारे लिए धन कमा रहा हूं। तुमने जितना धन दिया है, उससे चार गुना मैंने कर दिया है। और यह आवारा सब बरबाद करके लौट रहा है, इसका स्वागत हो रहा है! तो बाप ने कुछ बातें कहीं, जो समझने जैसी हैं।

बाप ने कहा, प्रेम कमाने वाले में और गैर कमाने वाले में फर्क नहीं करता। और प्रेम, जो निकट है, उसके प्रति तो आश्वस्त है; जो दूर चला गया है, उसे पास लाने की कोशिश करता है। और तुम तो ठीक ही हो, इसलिए तुम्हारे लिए किसी विशेष उत्सव की जरूरत नहीं, तुम्हारे लिए तो मेरे आशीर्वाद प्रतिपल

चल रहे हैं; लेकिन जो भटक गया है, उसके लिए विशेष आयोजन की जरूरत है, तभी वह आश्वस्त हो सकेगा।

और जीसस कहते थे कि ठीक वैसे ही जैसे कोई गडरिया घर लौटता हो सांझ अपनी भेड़ों को लेकर, और अचानक पाता है कि एक भेड़ खो गई, तो हजार भेड़ों को वहीं जंगल के अंधेरे में छोड़कर वह एक भेड़ को खोजने निकल जाता है। हजार की चिंता नहीं करता कि क्या होगा, लेकिन एक जो भटक गई है, उसे लेने निकल जाता है। और जब वह एक भेड़ मिल जाती है जो भटक गई, तो उसे कंधे पर रखकर वापस लौटता है।

जीसस कहते थे कि प्रेम महत्वाकांक्षा नहीं है। यही मैं तुमसे कहता हूं। प्रेम की कोई मांग नहीं है। प्रेम बच्चे के द्वारा कुछ पाना नहीं चाहता। प्रेम तो बच्चे को ही परमात्मा की तरह पाना चाहता है, बच्चे के द्वारा कुछ नहीं पाना चाहता। बच्चे के कृत्यों का बड़ा सवाल नहीं है, बच्चे की आत्मा का सवाल है।

लेकिन शिक्षा दी जा सकती है विद्यालय में, धर्म कौन देगा?

धर्म के भी विद्यालय हमने बना रखे हैं, वे नकली हैं। क्योंकि धर्म का कोई विद्यालय नहीं हो सकता। एक पंडित के पास भेज देते हैं, जिसे खुद भी धर्म का कुछ भी पता नहीं है। जो खुद वैसा ही जी रहा है, जैसे तुम जी रहे हो। तुम दुकान कुछ और करते हो, वह धर्म की दुकान करता है। तुम दोनों ही दुकानदार हो। उसके पास हम बच्चों को भेज देते हैं धर्म सीखने। वह सिखा देता है; जैसे धर्म कोई ज्यॉग्रफी हो, कि इतिहास हो, पाठ पढ़ा देता है, बच्चे को कंठस्थ करवा देता है। और धर्म की भी परीक्षाएं हैं। बच्चे परीक्षा पास करके, सर्टिफिकेट लेकर लौट आते हैं।

यह धोखा है। धर्म की कोई परीक्षा नहीं, जीवन ही पूरी उसकी परीक्षा है। और धर्म का कोई सर्टिफिकेट नहीं दे सकता, मौत ही देगी। मरते क्षण ही मौत सर्टिफिकेट देगी कि तुम धार्मिक थे या नहीं। उसके पहले कोई सर्टिफिकेट नहीं दे सकता। मौत के क्षण में अगर तुम आनंदित रहे, तो तुम उत्तीर्ण हुए। मौत के क्षण में अगर तुम दुखी हुए, तो तुम अनुत्तीर्ण हुए। जीवन, पूरा जीवन, धर्म की शिक्षा है। और मृत्यु उसकी परीक्षा है।

कौन पंडित इसे पूरा करेगा? कौन सा शास्त्र इसे पूरा करेगा? कोई शास्त्र, कोई पंडित काम नहीं आ सकता। और तुम्हें धर्म की कोई खबर नहीं है, इसलिए कैसे तुम बच्चे को धर्म दो? कैसे तुम उसे ध्यान दो? तुमने खुद ही ध्यान कभी नहीं जाना, तुम खुद ही कभी उस रस में नहीं बहे। बच्चे को तुम्हें जो देना हो, वह तुम्हारे पास होना चाहिए। धनी बाप होगा, तो बेटे को धन देगा। ध्यानी बाप होगा, तो बेटे को ध्यान देगा। जो तुम्हारे पास नहीं है, वह तुम दोगे कैसे? प्रेमी बाप होगा, तो प्रेम देगा। हम वही दे सकते हैं, जो हमारे पास है।

मुझसे लोग पूछते हैं--कभी कोई युवक, कोई युवती--कि क्या यह उचित होगा कि वे एक बच्चे को जन्म दें! तो मैं उनको कहता हूं, पहले तुम ध्यान में गहरे हो जाओ। क्योंकि जब बच्चा सामने खड़ा होगा, तब तुम उसे दोगे क्या?और ध्यान अगर तुम्हारे पास नहीं, तो बच्चे की मौजूदगी तुम्हें बड़ा निर्बल और दुर्बल और दीन सिद्ध करेगी। तुम्हारे पास देने को कुछ भी नहीं है। तुम पहले ध्यान में गहरे उतर जाओ, तब तुम मां बनना या पिता बनना। क्योंकि तब मां और पिता बनने का जो महत दायित्व है, उसे तुम पूरा कर सकोगे। और दायित्व की भांति नहीं, एक आनंद की भांति पूरा कर सकोगे।

ध्यान भी दो बच्चे को, विचार भी दो। विचार से वह संसार में सफल होगा, ध्यान से वह परमात्मा में सफल होगा। विचार उसे दो ताकि उसकी बुद्धि निखरे, ध्यान उसे दो ताकि उसका हृदय पवित्र होता चला जाए।

और जहां हृदय की पवित्रता और बुद्धि की सक्रियता का मिलन होता है, वहां इस जगत में जो महत्वपूर्ण से महत्वपूर्ण घटना है, वह घटती है। वहां सक्रियता और निष्क्रियता दोनों संतुलित हो जाते हैं। वहां रात और दिन दोनों ठहर जाते हैं। वहां मृत्यु और जीवन, दोनों के पार जो है, उसका दर्शन शुरू हो जाता है।

– नहीं राम बिन ठांव
प्रवचन न. 10

माला ध्यान के लिए एक उपकरण है

-ओशो

आप मुझसे पूछते हैं, "यह माला क्यों? यह तस्वीर क्यों?"

मैं कहूंगा, "इसको इस तरह से उपयोग करें तो ऐसा होगा," और मेरा उत्तर जितना संभव हो वैज्ञानिक होगा। धर्म कभी भी तर्कसंगत होने का दावा नहीं करता है, इसका केवल मात्र दावा तर्कहीन होने का है।

इस तरह से माला का प्रयोग करें, चित्र पर ध्यान करें तो एक समय ऐसा आएगा तब चित्र नहीं रहेगा। ऐसा होता है। फिर तस्वीर की अनुपस्थिति एक दरवाजा बन जाती है। उस दरवाजे के माध्यम से मेरे साथ संवाद करे। ऐसा होता है।

ध्यान करने के बाद, इस माला को उतार दे और महसूस करें, और फिर इस माला को पहने और महसूस करें, और आप अंतर महसूस करेंगे।

इस माला के बिना आप पूरी तरह से असुरक्षित महसूस करेंगे, पूरी तरह से एक बिना बागडोर की शक्ति में जो हानिकारक हो सकता है। इस माला के साथ आप सुरक्षित महसूस करेंगे, आप अधिक आश्वस्त, व्यवस्थित होंगे। कुछ भी बाहर से विक्षुब्ध नहीं कर सकता। ऐसा होता है; आप प्रयोग करेंगे तो जान पाएंगे। ऐसा क्यों होता है इसका वैज्ञानिक रूप से भी उत्तर दिया जाना संभव नहीं है। और धार्मिक रूप से उत्तर देने का कोई सवाल नहीं है। धर्म कभी दावा नहीं करता, यही कारण है कि धर्म के इतने सारे अनुष्ठान अप्रासंगिक हो जाते हैं।

समय बीतने के साथ, एक बहुत ही सार्थक अनुष्ठान भी व्यर्थ हो जाते हैं, क्योंकि चाबियाँ खो जाती हैं और कोई भी यह नहीं कह सकता है कि यह अनुष्ठान क्यों मौजूद है। तब यह सिर्फ एक मृत रस्म बन जाती है। आप इसके साथ कुछ नहीं कर सकते। आप इसे प्रदर्शन कर सकते हैं, लेकिन कुंजी खो गई है। उदाहरण के लिए, आप माला पहनकर जा सकते हैं, और यदि आप नहीं जानते कि इसमें चित्र कुछ आंतरिक संवाद के लिए है, तो यह सिर्फ एक मृत वजन होगा। फिर चाबी खो जाती है। माला आपके साथ हो सकती है, लेकिन कुंजी खो गई है। फिर एक न एक दिन आपको माला फेंकनी ही पड़ेगी क्योंकि यह बेकार है।

माला ध्यान के लिए एक उपकरण है। यह एक कुंजी है। लेकिन यह केवल अनुभव के माध्यम से आएगा। मैं केवल अनुभव की ओर आपकी मदद कर सकता हूं। और जब तक ऐसा नहीं होगा, आपको पता नहीं चलेगा। लेकिन ऐसा हो सकता है, यह इतना आसान है, यह बिल्कुल मुश्किल नहीं है। जब मैं जीवित हूं, तो यह बहुत आसान है। जब मैं वहां नहीं रहूंगा, तो यह बहुत मुश्किल होगा।

इस पृथ्वी पर मौजूद ये सभी प्रतिमाएँ ऐसे ही साधन के रूप में उपयोग की जाती थीं, लेकिन अब वे अर्थहीन हैं। बुद्ध ने घोषणा की कि उनकी प्रतिमा नहीं बनाई जानी चाहिए। लेकिन मूर्तियों द्वारा जो काम किया गया था, वह अभी भी करना होगा। यद्यपि प्रतिमा निरर्थक है लेकिन असली चीज वह काम है जो इसके माध्यम से किया जा सकता है।

महावीर का अनुसरण करने वाले आज भी अपनी प्रतिमा के माध्यम से महावीर से संवाद कर सकते हैं।

तो बुद्ध के शिष्यों को क्या करना चाहिए?इसीलिए बोधि वृक्ष इतना महत्वपूर्ण हो गया; इसका उपयोग बुद्ध की प्रतिमा के स्थान पर किया गया था। बुद्ध के बाद पाँच सौ वर्षों तक कोई मूर्ति नहीं थी। बौद्ध मंदिरों में केवल बोधि वृक्ष की तस्वीर और दो प्रतीकात्मक पैरों के निशान रखे गए थे, लेकिन यह पर्याप्त था। वह अब भी जारी है। बोधगया में मौजूद वृक्ष मूल वृक्ष के साथ निरंतरता में है। इसलिए आज भी जो लोग जानते हैं वे बुद्ध के साथ बोधगया में बोधि वृक्ष के माध्यम से संवाद कर सकते हैं।

यह सिर्फ व्यर्थ नहीं है कि दुनिया भर से भिक्षु बोधगया आते हैं। लेकिन उन्हें कुंजी पता होनी चाहिए, अन्यथा वे बस जाएंगे और पूरी बात सिर्फ एक अनुष्ठान होगी।

तो ये कुंजियाँ हैं – विशेष मंत्रों का एक विशेष तरीके से जप किया जाता है, एक विशेष तरीके से उच्चारित किया जाता है, इस तरह की और ऐसी आवृत्तियों के साथ एक विशेष तरीके से जोर दिया जाता है। एक तरंग दैर्ध्य बनाया जाना चाहिए, तरंगों का निर्माण किया जाना चाहिए। फिर बोधि वृक्ष सिर्फ बोधि वृक्ष नहीं है; यह एक मार्ग बन जाता है, यह एक दरवाजा खोलता है। फिर पच्चीस सदी और नहीं हैं, समय का अंतराल खो जायेगा और तुम बुद्ध के सामने आ जाओगे। लेकिन चाबियां हमेशा खो जाती हैं। तो बस यही कहा जा सकता है

लॉकेट का उपयोग करें, और आपको बहुत कुछ पता चल जाएगा। मैंने जो कहा है, वह सब तो ज्ञात होगा ही, और उस से भी अधिक जो मैंने नहीं कहा है वह भी ज्ञात होगा।

– आई एम द गेट, चैप्टर 3, प्रश्न 2 (अंश) से अनुवादित

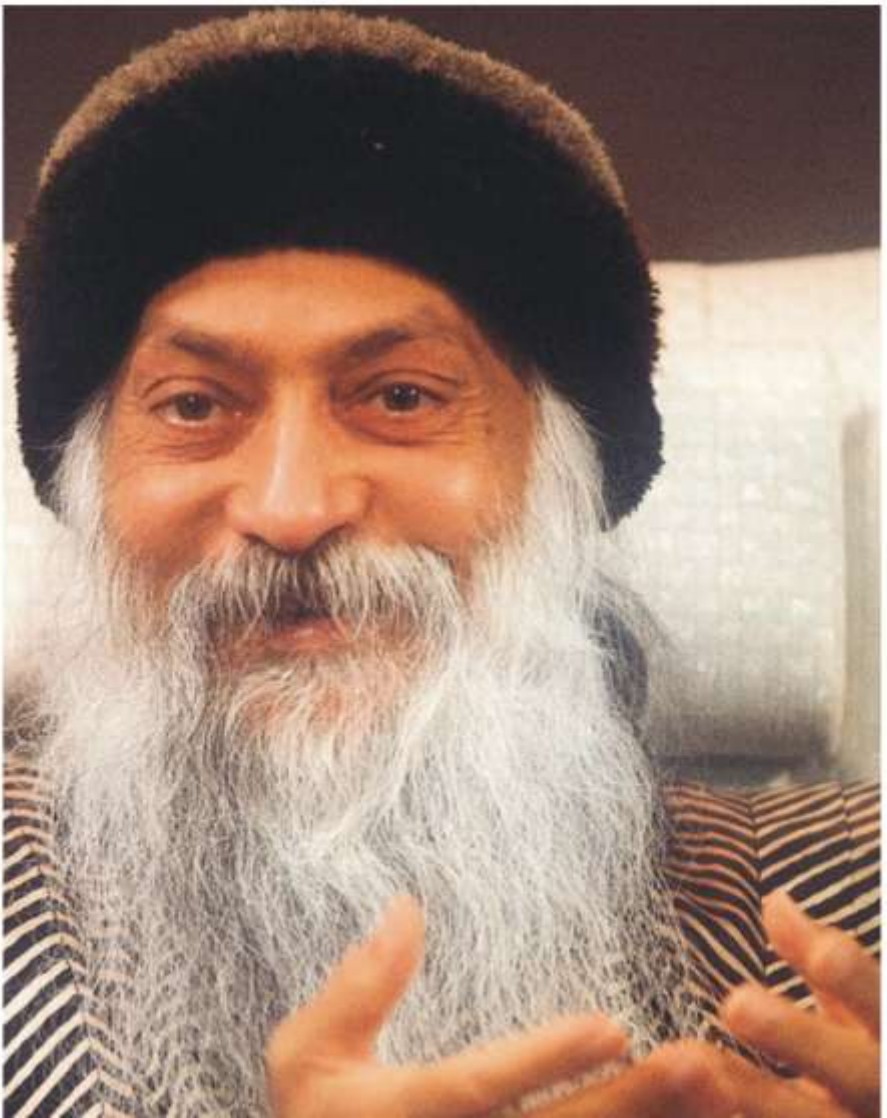

पेड़ की तरह महसूस करो और झूमो

-ओशो

मैं बारह वर्ष का हूं, क्या मैं ध्यान करना शुरू कर सकता हूं?

यही सही समय है, जब तुम चौदहवें वर्ष के करीब आ रहे हो तब तुम्हें ध्यान शुरू कर देना चाहिए। अभी तुम बारह वर्ष के हो, ये दो वर्ष तुम्हारे लिए बहुत महत्व रखते हैं। हर सात वर्ष में मन बदल जाता है। चौदहवां वर्ष एक महत बदलाव का समय होगा, तो यदि व्यक्ति तैयार हो, तो बहुत कुछ संभव हो जाता है; यदि व्यक्ति तैयार नहीं है, तब वह इस परिवर्तन से चूकता चला जाएगा। और जो कुछ भी शुभ है वह हमेशा तभी घटित होता है जब तुम उस परिवर्तन के समय से गुजर रहे होते हो। सातवें वर्ष में बचपन विदा हो जाता है; चौदहवें वर्ष में किशोरावस्था चली जाती है; और फिर इक्कीसवें और अट्ठाइसवें वर्ष में परिवर्तन घटित होता है। हर सात वर्ष का एक चक्र होता है।

हो, तो ध्यान करना शुरू कर दो। और ध्यान से मेरा अर्थ है जब भी तुम शांत बैठे झूमना शुरू करो... अपने आप को एक पेड़ की तरह महसूस करो और झूमो। जैसे ही तुम झूमते हो और पेड़ की तरह महसूस करते हो, तुम्हारा मनुष्य रूप मिट जाएगा, और यह मिट जाना ही ध्यान है। मिट जाने के हजारों तरीके हैं।

मैं तुम्हें सरलतम विधि दे रहा हूं, जिसे हर कोई सरलता से कर सकता है। नृत्य करो और नृत्य में खो जाओ, गोल-गोल घूमो और इस गोल-गोल घूमने में खो जाओ। दौड़ो, जॉगिंग करो और जॉगिंग में खो जाओ, जॉगिंग ही रह जाने दो और अपने को भूल जाओ। यह भूल जाना ही ध्यान है और यह इसी आयु में संभव है।

फिर ध्यान के विभिन्न द्वार हैं जो बाद में खुलते हैं, लेकिन बच्चों के लिए स्वयं को भूल जाना ही ध्यान है। तो अपने आप को किसी भी चीज में भुला दो और तुम पाओगे कि ध्यान तुम्हारे पास आ रहा है।

शिक्षा में क्रान्ति

-ओशो

"(30-missing 1,2,3,5,8,9)"

-Osho

Anand means bliss and divyo means divine -- divine bliss. And that has to be remembered. I give you the name so it becomes unconsciously an undercurrent of remembrance -- that wherever there is bliss, there is the divine.

Bliss is the manifestation of the element divine. So become more blissful if you want to become more God-full. Whenever a person is happy, he is close to God. Whenever he is unhappy, he is far away. In fact unhappiness is just an indicator that you are losing track, that you are going astray; that somehow you are missing your natural element, that you are falling out of tune with nature, hence unhappiness. Whenever you feel happy it simply means that you have fallen into the harmony, into the original harmony.

And bliss is such a depth of happiness that even happiness is not felt. If you go on feeling happiness then something remains like a jarring note. You are still a little unhappy if you feel happiness. If you say, 'I'm happy,' that means that still something of unhappiness continues. When happiness is really there, then there is nobody who is unhappy. There is simply happiness; nobody even to be aware of it. Even that much distance does not exist that you can become aware of it.

Whenever you become aware of something, you are separate from it. If you are happy, you are separate and happiness is separate. So being really happy means becoming happiness rather than becoming happy. You dissolve by and by. When you are unhappy, you are too much. The ego comes to a focusing when one is unhappy. That's why egoistic people remain very unhappy and unhappy people remain very egoistic. There is an inter-connection.

If you want to be egoistic, you have to be unhappy. Unhappiness gives you the background and the ego comes out of it very clear, crystal-clear... as if a white dot on a black background. The more happy you are, the less you are. That's why many people want to become happy but really they are afraid to. That's my observation -- that people say they would like to be happy but they really don't want to be. They are afraid that they will be lost.

Happiness and egos can't go together. So the more happy you are, the less you are. There comes a moment when only happiness is, and you are not. We have called it 'nirvana' in India -- when you have completely ceased to be, so there is no possibility of any conflict.

Divyo means divine. The word divine comes from 'div', the sanskrit root, and anand means bliss, so remember this, and try to become more and more happy. I say 'try' because much effort is needed in the beginning. We have become so accustomed to being unhappy and unhappiness has gone so deep that we have to uproot it. The weeds have to be taken out -- root and all -- hence the effort. Once those weeds of unhappiness are taken out, happiness is spontaneous. Then there is no effort involved. One is simply happy. Then to be is just to be happy; there is no other way.

-A rose is a rose is a rose, chp 8

हर माह इस स्तंभ में हम ओशो की पुस्तकों के संदर्भ में एक परिचय देंगे

असंभव क्रांति

ओशो कहते हैं-स्वतंत्रता विद्रोह नहीं है, क्रांति है।

क्रांति की बात ही अलग है। क्रांति का अर्थ है: दूसरे से कोई प्रयोजन नहीं है।

हम किसी के विरोध में स्वतंत्र नहीं हो रहे हैं। क्योंकि विरोध में हम स्वतंत्र होंगे, तो वह स्वच्छंदता हो जाएगी। हम दूसरे से मुक्त हो रहे हैं-- उससे हमें विरोध है, न हमें उसका अनुगमन है। न हम उसके शत्रु हैं, न हम उसके मित्र हैं-- हम उससे मुक्त हो रहे हैं। और यह मुक्ति, 'पर' से मुक्ति, जिस ऊर्जा को जन्म देती है, जिस डाइमेशन को, जिस दिशा को खोल देती है, उसका नाम स्वतंत्रता है।

पुस्तक के कुछ मुख्य विषय-बिंदु:-

पल-पल, मोमेंट टु मोमेंट जीने का सूत्र
मनुष्य होने की पहली शुरुआत भीड़ से मुक्ति है
शास्त्र और किताब में फर्क क्या है?
धर्म आत्मा का विज्ञान है
प्रेम का जीवन ही सृजनात्मक जीवन है

विषय सूची

प्रवचन 1: सत्य का द्वार
प्रवचन 2: पुराने का विसर्जन, नये का जन्म
प्रवचन 3: मौन का स्वर
प्रवचन 4: ध्यान की आंख
प्रवचन 5: क्रांति का क्षण
प्रवचन 6: जीवन का आविर्भाव
प्रवचन 7: सत्य का संगीत
प्रवचन 8: सृजन का सूत्र
प्रवचन 9: काम का रूपांतरण
प्रवचन 10: बस एक कदम

संपूर्ण शिक्षा का लक्ष्य

–स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

हमारी स्कूल का मूल स्रोत है साविद्या या विमुक्ते। विद्या वह है जो हमें मुक्त करे, कृपया इस प्रकाश डालने की कृपा करें?

यह हमारी शिक्षा का मूलमंत्र नहीं है, आप भूलचूक में हैं। वास्तविक विद्या तो यही है जो उपनिषद का ऋषि कह रहा है कि विद्या वह है जो मुक्त करे। लेकिन हमारी शिक्षा तो हमारे लिए बंधन निर्मित करती है।

समझो, मैं मेडिकल साइंस पढ़ा इस नालेज ने मेरे चारों तरफ एक दीवाल खड़ी कर दी, मैं बंध गया, अब मुझे केवल एलोपैथी ही ठीक लगती है, मैं मान ही नहीं सकता कि होमियोपैथी भी कोई पैथी है, मैं मान ही नहीं सकता कि नेचुरोपैथी या एक्युपंचर भी किसी पर असर कर सकती है, कि हर्बल मेडिसिन से मरीजों को कुछ फायदा होगा। मेरी शिक्षा ने मेरे मन को बांध दिया, मैं कूप मंडूक बन गया, कुएं का मेंढ़क और मैं समझता हूँ कि ये जो कुआं हैं यही सारी दुनिया है, इसके अलावा कुछ है ही नहीं या है तो फिर वह गलत है, मेरा कुआं ही सच है।

हम जिसे शिक्षा कह रहे हैं अभी यह विद्या नहीं है। उपनिषद का अगर यह पूरा सूत्र या इसके आगे–पीछे के सूत्र पढ़ो तब आपको स्पष्ट होगा। हम जिसको शिक्षा कह रहे हैं ऋषि के अनुसार है यह विद्या, यह मुक्त नहीं करती, यह हमें बांधती है। हमारे बंधन निर्मित होते हैं, अब हम ईर्ष्या से बंध गए, हम महत्वाकांक्षा से बंध गए, ये एम्बीसंश हमारी जंजीर हो गई, ये हमें घसीट रही हैं पूरी जिंदगी भर, हम मुक्त नहीं हुए। हम एंबीसंश की जंजीर में जकड़े हुए हैं और हमें जहाँ खींचा जा रहा है, हमारी कामनाएं जहाँ खींच रही हैं हम वहाँ खिंचे चले जा रहे हैं, हम बंधे हुए हैं। हम ईर्ष्या से बंधे हुए हैं, हम वैमनस्य भाव से बंधे हुए हैं, हम हिंसा की भावना से बंध गए हैं, हम मुक्त नहीं हुए। विद्या मुक्त करती है।

उपनिषद के अनुसार संसार की यह जो शिक्षा है यह अविद्या है। अगर हमारी शिक्षा में भावना का विकास और चेतना का विकास जुड़ जाए तब जाकर वह विद्या बनेगी, उसके बिना वह केवल अविद्या है।

अगला सवाल है, तनावमुक्त होने के लिए कौन सा ध्यान है?हम पढ़े-लिखे लोग नृत्य करना अशोभनीय मानते हैं, हंसना-रोना तो शायद भूल ही गए हैं, तनाव हमारी जिंदगी का एक अनिवार्य अंग बन गया है, कृपया समझाएं।

महत्वपूर्ण सवाल है, प्रकृति से गिरकर हम विकृति में फंस गए हैं। हंसना, रोना, खेलना, नाचना स्वाभाविक था। हम इतने विकृत हो गए हैं कि वे स्वाभाविक चीजें भी हमारे लिए अस्वाभाविक हो गई हैं। एक आदमी सड़क से उदास गुजर रहा है उसे देखकर आपको कभी ख्याल नहीं आता कि कुछ गड़बड़ है किन्तु अगर एक आदमी अकेला मुस्कुराता हुआ जा रहा हो तो आपको तुरंत लगेगा कि पगला गया है। ये कैसी संस्कृति है?एक प्रसन्न आदमी हमारे लिए डाउट पैदा करता है कि कुछ गड़बड़ है और एक उदास और चिंतित आदमी बिल्कुल नार्मल है। होना तो उल्टा चाहिए कि यदा-कदा कोई उदास दिखाई दे तो उससे पूछें कि क्या गड़बड़ है। यदा-कदा कोई उदास दिखाई दे, चिंतित दिखाई दे तो हम पकड़कर उसको साइकाट्रिस्ट के पास ले जाएं कि देखो इसको क्या हो गया, अभी तो प्रसन्न आदमी पर हमें डाउट होता है कि ये हंस क्यों रहा है या तो ये असभ्य है या फिर कोई गड़बड़ है। हां, अगर शराब पीकर यदि कोई हंसे तो हम फिर उसको स्वीकार लेते हैं कि ठीक है, ये तो नशे में है। सभ्य आदमी और हंसे, हम हंसी के दुश्मन, हम नृत्य के दुश्मन, हम गीत के दुश्मन।

हम अपने आश्रम में गीत गाना सिखाते, नाचना सिखाते हैं। बहुत लोग आकर कहते हैं कि ये क्या सिखा रहे हैं आप, ये कैसी शिक्षा धर्म की, आश्रम में तो धर्म सिखाना चाहिए, ध्यान सिखाना चाहिए, गायन-नर्तन क्यों?और अधिकांश लोग कहते हैं कि हमने जिंदगी में कभी गाया ही नहीं, 95 परसेंट लोग कहते हैं कि दिल में इच्छा तो है लेकिन हमें याद है कि बचपन में जब भी हमने गाया पिताजी डांट दिए कि चुप रहो, हल्ला मत करो। सभी बच्चे नाचना चाहते हैं, उछलना चाहते हैं, कूदना चाहते हैं, हंसना चाहते हैं लेकिन हम नाचने नहीं देते। वो विश्वजीत के पिताजी ने जो कहा था न कि गवैया-नचैया ने बर्बाद कर दिया, उस जमाने के सुप्रसिद्ध हीरो के बारे में उसके बाप की ऐसी सोच है। अब सोचिए हमारे भीतर कैसी धारणा बैठी है हंसी-खुशी के खिलाफ।

आपने पूछा है कि कौन सा ध्यान हमारे लिए उपयुक्त होगा, मैं चाहूँगा कि लीला ध्यान एक विशेष ध्यान की पद्धति है उसको आप करिए। ओशो के द्वारा बताई गई विधियों में से एक बहुत महत्वपूर्ण कि हम थोड़ी देर के लिए जी भरकर हंसें, अकारण हंसें। हम हंसते हैं तो हमारी हंसी में भी विकृति होती है। अगर कोई केले के छिलके पर फिसलकर गिर पड़ता है तब हम हंसते हैं, शायद हम उसको गिराना ही चाह रहे थे, जो काम हम न कर पाए वाह रे केले के छिलके, तूने कर दिया। इसलिए हमें हंसी आती है कि थैंक यू केला, अच्छा पटका, यही हम चाह रहे थे। हमारी हंसी भी स्वाभाविक हंसी नहीं है, इट्स वेरी परवर्टेड। तो लीला ध्यान में हम अकारण हंसते हैं।

उसके बाद फिर रोने का चरण आता है कि अब रोएं। हम रोना भी भूल गए हैं और खासकर पुरुष तो बिल्कुल ही भूल गए हैं, महिलाएं तो थोड़ा-बहुत रो भी लेती हैं। वो तो बच्चे जब रोते हैं तब भी पुरुष डांटते हैं कि तू लड़का होकर रोता है, अरे मर्द बच्चा। वो मर्द बच्चा एकदम से समझता है कि अरे! कुछ गड़बड़ हो गई। जैसे लड़कियों का काम है रोना, लड़कों को नहीं रोना चाहिए।

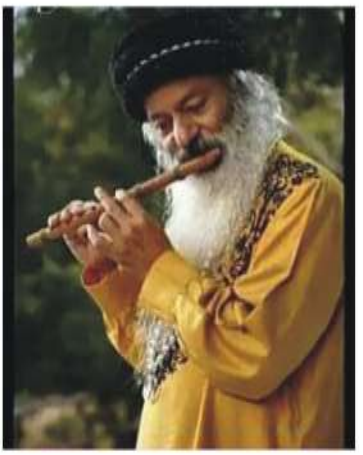

प्रकृति ने अश्रु की ग्रंथि लड़कों और लड़कियों को बराबर दी है दोनों की आंखों में। आप किसी भी आई स्पेशिलस्ट से पूछ लेना कि उस ग्रंथि में फर्क है क्या?दोनों में आंसू बनाने की क्षमता बराबर है इससे पता चलता है कि प्रकृति भी चाहती है कि रोओ जब कोई दुख या तकलीफ हो तो, सब निकल जाएगा, बह जाएगा और फिर से फ्रेस हो जाओगे। लेकिन मर्द बच्चा तो रो नहीं सकता, नाक कट जाएगी, ये तो लड़कियों का काम है। आप याद रखना, महिलाओं ने दुनिया में अपराध बहुत कम किए हैं। अगर 98 परसेंट पुरुषों ने किए हैं तो मुश्किल से दो परसेंट पुरुषों ने किए हैं। पागलखानों में जाकर गिनती लगा लेना 98 परसेंट पुरुष हैं और दो परसेंट महिलाएं हैं बस। क्योंकि महिलाओं का पागलपन रोज निकल जाता है, रो लेती हैं, चीख लेती हैं, कभी बाल खींचती हैं गुस्से में, कभी दीवाल से सिर दे मारा, कभी गुस्से में खाना नहीं खाया, पतिदेव मना रहे हैं। उसको पता है कि खा लेंगे, या पतिदेव जब आफिस जाएंगे तब खा लेंगे इसलिए उनका पागलपन थोड़ा-थोड़ा निकलता रहता है। महिलाएं ज्यादा प्राकृतिक हैं, ज्यादा सहज हैं पुरुषों की तुलना में। इन पुरुषों को तो सभ्यता का शौक चढ़ा है, शौक मतलब बीमारी, सभ्यता का रोग। वो न हंसता, न रोता, वो तो अपने सूट और टाई बांधकर खड़ा रहता है सभ्य आदमी, जेंटलमैन। अब जेंटलमैन कैसे हंस सकता है, रोना तो बहुत दूर की बात है।

कोई अंग्रेज अगर हंसता हुआ मिल जाए तो वो या तो ठीक-ठीक अंग्रेज नहीं है या किसी दूसरे देश में जाकर यह सीख गया और भटक गया। अंग्रेज और हंसे, कभी नहीं। महिलाओं ने युद्ध नहीं किए हैं, महिलाएं पागल नहीं होतीं। वही सुसाइड, बातें करती हैं जरूर कि आत्महत्या कर लेंगे, वो बात ही रह जाती है, करती नहीं हैं। वो नींद की गोली भी खाती हैं तो पहले पता लगा लेती हैं कि कितने में नहीं मरेंगे, पक्का करके उतना ही खाती हैं। ये तो एक प्रकार की धमकी है पति को डराने के लिए कि बच्चू अगर मर गए तो हथकड़ियां लग जाएंगी। हमारी बात मान लो, सेल लगी है साड़ी की तो चार साड़ी हमें खरीद लेने दो। पतिदेव को भी अक्ल आ गई। महिलाएं ज्यादा प्राकृतिक हैं पुरुषों की तुलना में। महिलाएं कम अपराधी हैं, कम विक्षिप्त होती हैं, कम आत्महत्या करती हैं, कम हत्याएं करती हैं, कम एक्सीडेंट करती हैं। सारी दुनिया में रिसर्च होता है ट्रैफिक एक्सीडेंट का जिसमें पाया गया है कि महिला ड्राइवर बहुत कम एक्सीडेंट करती हैं। पुरुष पगलाया हुआ, न हंसता, न रोता, न गाता, महिलाएं घर में थोड़ा गुनगुना भी लेती हैं। लड़कियां गाती रहती हैं, लड़का कैसे रो सकता है, कैसे हंस सकता है। फिर ये लड़का जाकर कहीं कार एक्सीडेंट करेगा। ये फिर कम में संतुष्ट नहीं होगा, ये कई लोगों के आंसू निकलवाएगा। थोड़ा प्राकृतिक बनो, सहज बनो। तो लीला ध्यान में पहले हंसने का चरण है, फिर रोने का चरण है तो जी भरकर रो लो, थोड़ी देर में अंदर का मन साफ हो जाएगा और तुम भीतर खाली हो जाओगे और उस खालीपन में, उस शून्यता में फिर ध्यान घट सकेगा और चेतना का विकास हो सकेगा।

एक मित्र ने पूछा है कि ओशो के प्रवचनों में जोरबा दी बुद्धा की बात आती है कृपया इसके बारे में थोड़ा समझाएं?

बुद्ध की बात तो आप जानते हैं, अध्यात्म के प्रतीक, ध्यान के प्रतीक, समाधि के प्रतीक, करुणा के प्रतीक। जोरबा एक ग्रीक उपन्यास का पात्र है, वह भौतिकवादी बिल्कुल मटेरियलिस्ट गेटीट्यूड का वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाला, भोगवादी व्यक्ति है। अतीत के पूरे मनुष्य जाति में अतीत दो खण्डों में बंटा रहा जिनको हम कहें अध्यात्मवादी और भौतिकवादी, मटेरियलिस्ट और स्प्रिचुअलिस्ट। संक्षेप में हम कह लें जोरबावादी या बुद्धवादी। कुछ लोग केवल देह केन्द्रित, शरीर के भोगविलास में लिप्त बस और कुछ लोग संसार के खिलाफ त्यागवादी, घर, परिवार और समाज को छोड़कर चले गए, जंगल में जा बैठे, तपस्या किए, अपने भीतर की शांति और आनंद को पाया और भीतर के ब्रह्म को जाना, आत्मज्ञान को पाया। ये दो प्रकार के लोग दुनिया में रहे।

आत्मवादी संसार के खिलाफ रहे और संसारवादी ये मानकर बैठ गए कि अध्यात्म मेरे लिए नहीं है। हम तो भोगी हैं, हम तो गृहस्थ हैं, हम ये सब कैसे कर सकते हैं। ओशो ने एक नई दृष्टि दी, वे कहते हैं कि एक पक्ष को मत चुनो। मनुष्य का होना फोर डायमेंशनल है– तन, मन, हृदय और चेतन। इसका संपूर्ण विकास हो, इसी का नाम जोरबा दी बुद्धा। हमारी आत्मा भी विकसित हो जैसी बुद्ध, महावीर, कबीर और नानक की हुई थी और हमारा मन भी विकसित हो। वैज्ञानिक दृष्टिकोण हो, कला भी विकसित हो, भाव भी विकसित हो, हम गीतकार भी हों, हम गायक भी हों, हम नर्तक भी हों और हम अपनी देह का भी ख्याल रखें, अपने स्वास्थ्य का भी ख्याल रख सकें। इस बात को ओशो ने प्रतीकात्मक रूप से कहा है जोरबा दी बुद्धा। एक संपूर्ण शिक्षा का लक्ष्य यही होना चाहिए। धन्यवाद। जय ओशो।

सितम्बर-अंक

गुरू देवो भव

कृपया PDF खोलिए
एंव
रचनाओं का आनन्द उठाईए

अपने साहित्य–प्रेमी मित्रों को फारवर्ड करना न भूलें।

आपके सवाल- स्वामी जी के जवाब

साक्षात्कार

-स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

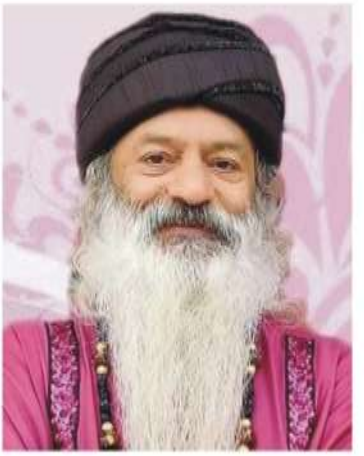

मनुष्य के लिए ईश्वर द्वारा भेट किया गया सबसे बेहतरीन उपहार क्या हो सकता है?

प्रभु से मिला है प्यारा उपहार
ईश्वर का स्वर यानी 'ओंकार'
शांति में डूबो, ध्यान से सुनो
भीतर-बाहर सर्वत्र है गुंजार।

एक वाक्य क्या है जो आपके जीवन की सीख को अभिव्यक्त करता है?

भीतर ध्यान साधो, बाहर प्यार बांटो
ओशो को समझो, परमानंद पा लो।

आपकी राय में सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार क्या है?

बाहरी जगत में हुए प्राचीनतम आविष्कारों में अग्नि और चाक को सर्वोपरि माना जाता है। क्रमशःइनसे ही आधुनिक विज्ञान की विभिन्न शाखाएं फली-फूलीं। दुख, असुविधा, गरीबी, बीमारी, असहाय दशा से काफी हद तक मुक्ति मिली।

धरती स्वर्ग बनने की ओर अग्रसर है।

आंतरिक जगत में हुए प्राचीनतम आविष्कारों में ध्यान-अग्नि तथा आवागमन-चक्र महत्वपूर्ण हैं। इस चौतन्य अग्नि में कामनाएं जलकर नष्ट हो जाती हैं एवं आत्मा जन्म-जन्मांतर के चक्र से मुक्त हो जाती है।

चेतना निर्वाण को उपलब्ध होती है।

क्या "अंतर्मुखी स्वभाव" तथा "बहुर्मुखी स्वभाव"बच्चों के मानसिक तनाव का कारण हो सकता हैं?

स्वयं की प्रति के अनुसार जीने में शांति एवं प्रसन्नता फलित होती है. अपने स्वभाव के विपरीत चलने में तनाव उत्पन्न होता है.यदि कोई बच्चा अंतर्मुखी किस्म का है और उसे खुद की अंतः प्रेरणा से जीने की स्वतंत्रता है तो वह तनावग्रस्त नहीं होगा. इसी प्रकार बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाले बच्चे को अपने स्वभाव में जीने की आजादी हो तो वह भी तनाव मुक्त रहेगा. समस्या तब पैदा होती है जब हम बच्चे को उसकी प्रति के मुताबिक नहीं जीने देते. भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है कि दूसरे के अनुकरण में जीने की बजाय स्वधर्म में मर जाना भी श्रेयस्कर है. किंतु हमारे परिवार, समाज-व्यवस्था और शिक्षा प्रणाली बच्चों को नकल करना सिखाते हैं. यह प्रतिस्पर्धा असली वजह है तनाव पैदा होने की.

सदगुरु ओशो कहते हैं कि यदि कमल के फूल को कोई सिखा दे कि गुलाब जैसे हो जाओ, और गुलाब से कहे कि तुम कमल जैसे हो जाओ. चंपा को सिखा दे की चमेली होना आदर्श है, और चमेली का गुरु सिखा दें कि चांदनी बने बगैर जिंदगी व्यर्थ है. तो सभी फूल कुम्हला जाएंगे, पौधे मर जाएंगे, पूरा बगीचा बर्बाद हो जाएगा. कुछ ऐसा ही दुर्भाग्य सारी मनुष्य जाति के संग हुआ है. आगे के लिये सावधान! परमात्मा ने बच्चों को जैसे गुण देकर भेजा है उन्हें वैसा ही विकसित होने में मदद करना माता-पिता का कर्तव्य है और यही उनके सच्चे वात्सल्य-प्रेम का प्रमाण भी है. उन्हें अपनी इच्छानुसार मत ढालो. उन्हें स्वधर्म में जीने का इंतजाम करो, साहस दो, सहयोग पहुंचाओ। निवेदन है कि अधिक स्पष्टीकरण हेतु (शिक्षा में क्रांति) किताब डाउनलोड कीजिये।

मैं अपने मस्तिष्क को जीनियस बनने के लिए कैसे प्रशिक्षित कर सकता हूं?

प्रत्येक बच्चा कुछ छुपी हुई असाधारण प्रतिभा लेकर जन्मता है। परिवार, समाज एवं शिक्षा प्रणाली उसकी प्रतिभा को अक्सर रिकॉग्नाइज नहीं करते, तथा नेगेटिव कमेंट कर-कर के उसकी प्रतिभा के बीज को पनपने नहीं देते।

इसलिए सवाल प्रतिभा को पैदा करने का नहीं बल्कि पहचान का है।

आत्म सम्मोहन (self hypnosis) की कला सीखने के पश्चात, अपने अवचेतन मन में डूबकर नकारात्मकता की पर्त को हटाना होगा। स्वयं के बारे में सकारात्मक भावना स्थापित करनी होगी। फिर छुपी हुई प्रतिभा को पहचान कर, उन बीजों को पुष्पित-पल्लवित करने के प्रयास

स्वस्थ रहें, मस्त रहें

-स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

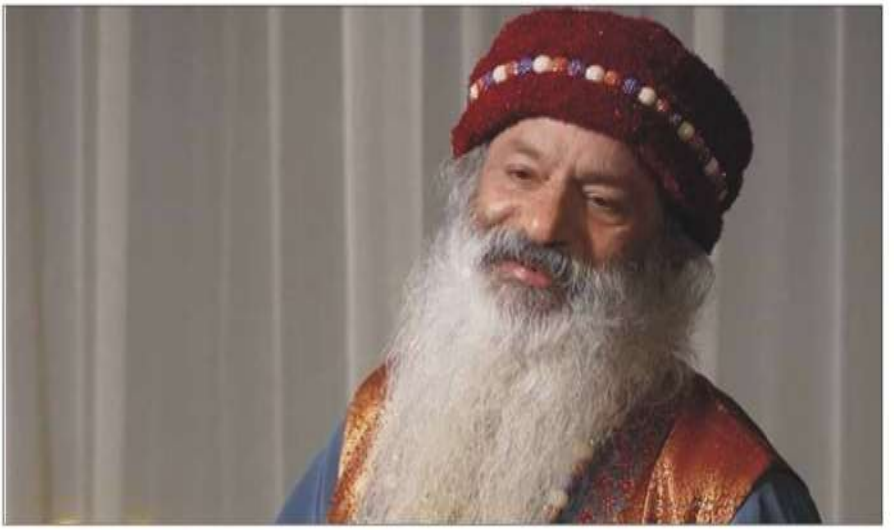

भोजन में फाईबर का क्या महत्व है ?

फाईबर का महत्व

फाईबर भोजन में मौजूद रेशा को कहते हैं। इसे हमारा शरीर पचा नहीं सकता है, और यह खून में नहीं जाता है। विभिन्न खाना में फाईबर, अलग-अलग मात्रा में होता है। यह शरीर में कोई खराबी नहीं करता, बल्कि यह आपके शरीर के लिये बहुत ही फायदेमंद होता है। आप सामान्य मात्रा में फाईबर खाकर शरीर को अनेक बीमारियों से बचा सकते हैं, जैसे दिल की बीमारी, डायबिटीज, आंत में डायवर्टिकुलोसिस का रोग। फाईबर खाने से कब्जीयत नहीं होता है। फाईबर दो प्रकार के होते हैं, एक पानी में घुलनशील, और दूसरा जो पानी में नहीं घुल सकता है।

पानी में घुलनेवाला फाईबर, खाने में मौजूद कोलेस्ट्रोल को, पैखाने के रास्ते शरीर से बाहर निकाल देता है। इस प्रकार के रेशे कुछ तरह के फल, सब्जी, बींस, और बारली में मिलते हैं। पानी में न घुलनेवाला फाईबर पाचन में मदद करता है। यह मल की मात्रा बढ़ाकर सही तरह से पैखाना होने में मदद करता है। इससे कब्जीयत नहीं हो पाता। इस तरह के रेशे गेहूं, छिलका युक्त अनाज, और सब्जी में मिलते हैं।

हमें करीब 25 ग्राम फाईबर प्रतिदिन खाना चाहिये। अगर आप कम लेते हैं, तो खाने में बदलाव लाकर थोड़ा-थोड़ा करके बढ़ा सकते हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि कच्चे फल और सब्जियाँ भोजन को पचाने में सहायता करने के साथ शरीर के लिए जरूरी पोषक तत्व भी उपलब्ध कराते हैं। फाइबर आतों की सफाई का काम करता है। अगर हमारे भोजन में फाइबर न हो तो हमारा भोजन अन्दर आँतों में चिपक जाता है। जब हम किसी सब्जी को ज्यादा पकाते, भूनते या तलते हैं तो उसके रेशे नष्ट हो जाते हैं। कच्ची सब्जियों और फलों का कोई और विकल्प भी नहीं है।

कच्चे फल और सब्जियाँ रेशों से भरपूर होने के कारण शेष भोजन के लिए पाचन तंत्र में रास्ता साफ करते हैं। इनमें मौजूद रेशे पेट में जाकर फैलते हैं, जिससे कम खाने में ही पेट भरा हुआ महसूस होने लगता है।

क्या चीजें मानव रक्त को लाल बनाती हैं ?

रेड ब्लड सेल्स के भीतर हीमोग्लोबिन होता है। उसमें मौजूद लोह तत्व (पतवद) की वजह से लाल रंग दिखाई देता है।

क्या एलर्जी का कोई सटीक ट्रीटमेंट है ?

लगभग 50: एलर्जी के रोगी "डिसेंसटाइजेशन" नामक चिकित्सा पद्धति से ठीक हो सकते हैं।

इस इलाज के पहले पता लगाना जरूरी है की एलर्जी किन चीजों से है। उसके लिए पैथोलाजी लैब में 'एलर्जी पैनल-रु39 नामक इम्यूनोग्लोबुलीन टेस्ट करानी होगी।

माँ एवं स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती जी के वीडियो

मनुष्यों का जन्म क्यों हुआ? हम यहां, इस धरती पर क्यों है? इस के पीछे का रहस्य क्या है?

कैसे हम जीवन को बिना सीरियस हुए, लीला की तरह जी सकते है?

ओशो ने इस जगत को क्या दिया? जीवन के विभिन्न आयामों में ओशो के १५ महत्वपूर्ण योगदान!

Swamiji & Ma Eng Videos

Interview with Ma Priya & Sw. Shailendra Ji (in English) Part-1/4

Interview with Ma Priya & Sw. Shailendra Ji (in English) Part-2/4

Interview with Ma Priya & Sw. Shailendra Ji (in English) Part-3/4

Interview with Ma Priya & Sw. Shailendra Ji (in English) Part-4/4

Ma Amrit Priya ji's Videos

आनंदित रहने के सरल उपाय

जिंदगी का केन्द्र कौन होना चाहिए

एक बुद्ध पुरुष और सामान्य व्यक्ति में क्या अंतर है

हंस दो जरा...!

बुजुर्ग- बेटा, तुमने अभी तक शादी क्यों नहीं की?
युवक- अंकल, क्या आपने यह कहावत नहीं सुनी जाको राखे साईया, मार सके न कोय।

शादीशुदा आदमी, जब कभी दोस्तों के बीच थोड़ी देर के लिए अकेला जाता है, तो वो परोल पर छूटा हुआ कैदी जैसा लगता है.!

अत्यंत वृद्ध सज्जन से पूछा कि आपकी 103 वर्ष की दीर्घ आयु का रहस्य क्या है?
वे बड़ी सादगी से संक्षेप में बोलेः गरीबी।
मैंने कहाः मैं समझा नहीं। कुछ विस्तार से बताइए।
वे बोलेः सुनिए जी, यह सब युग्परिवर्तन का खेल है। हमारे पूर्वजों के जमाने में जन्म व मृत्यु मुफ्त होते थे!
अब दोनों काफी महंगे हो गए!
बिना सीजेरियन जन्म नही होता!
और बिना वेंटिलेटर मृत्यु नसीब नहीं।
मैं ठहरा गरीब आदमी, पिछली सदी में फ्री में पैदा तो हो गया था, मगर अब मरूं कैसे?

जिंदगी का केंद्र क्या होना चाहिए?

-मा अमृत प्रिया

"दिल जिससे जिंदा है वह तमन्ना तुम ही हो" यह ओरिजिनल जो गीत की लाइनें थी, ये बहुत बचपन में सुनी थी। नुसरत फतेह अली साहब ने गाया था कभी। एक संन्यासी जो कि पाकिस्तान से आए हुए थे और वह बजा रहे थे उन्होंने सुनाया था। वह यह लाइन थी –

दिल जिससे जिंदा है
वो तमन्ना तुम ही तो हो
हम जिस में बस रहे हैं,
हम जिस में बस रहे हैं
वो दुनिया तुम ही तो हो
दिल जिससे जिंदा है,
दिल जिससे जिंदा है, दिल जिससे जिंदा है

तो निश्चित रूप से हमारी जिंदगी जो है, जिंदगी का केंद्र जो है अगर सदगुरु हो गया तो हमारी जिंदगी ही बदल जाती है। हमारा पूरा अस्तित्व ही एक रूपांतरण कार्य हो जाता है। केवल मौजूदगी में सद्गुरु की, सब कुछ बदल जाता है। उस समय यह केंद्र बन गया कि दिल जिंदा किस से होना चाहिए?दिल का केंद्र कौन होना चाहिए?उतने बचपन में यह संस्कार अगर ढल जाते हैं तो यह बात बहुत गहराई तक चली जाती है। क्योंकि यह पूरी जो साधना है अध्यात्म की, यह अखंड जागरण की साधना है । यह साधना अखंड स्मरण की साधना है। हम किसके स्मरण में जी रहे हैं और वह स्मरण खंडित ना हो, अंडरकरंट चलता रहे । तो इसके लिए जरूरी है हम जागें, ज्यादा से ज्यादा। हम चौतन्य को, चेतना को बढ़ाएं, जागरूकता को बढ़ाएं कि हम किसके स्मरण में जी रहे हैं।

भगवान कृष्ण कहते हैं ना कि जब मृत्यु के समय जो व्यक्ति मुझे भजता है तो वह मेरे ही स्वरुप को प्राप्त होता है। लेकिन यह मृत्यु के समय कैसे भजेंगे, जब तक कि अगर हमने पूरी जिंदगी नहीं बजा, नहीं स्मरण किया। और वह स्मरण कैसा?वह स्मरण अगर हार्दिक है तब बात बनेगी। अगर हमने यांत्रिकी स्मरण किया तो वह ब्रेन तक ही जाएगा, सुपरफिशियल ही रहेगा। जब भी हम यांत्रिकी स्मरण करते हैं, मान लो कोई काम कर रहे हैं और भीतर जप चल रहा है तो फिर वह हमारा ब्रेन जो है वह ऑटोनॉमस पकड़ लेता है। इधर एक तरफ जप ही चलता रहता है दूसरी तरफ दूसरी बातें भी चलती रहती है,

साथ साथ चलती रहती है, सायमलटेनियसली चलती रहती है और उसका कोई मूल्य नहीं हैय वह तो खंडित है और वो हृदय तक नहीं जाता, यांत्रिक है।

क्यों हृदय तक चला जाए यह स्मरण?क्योंकि जो स्मरण हृदय तक गया है वही अंत समय में काम आएगा। पूरी जिंदगी हमने क्या किया है उसका निचोड़ ही काम आता है, सारी जिंदगी का पैटर्न बदलना होगा, केंद्र बदलना होगा।

हमारे होने की एक पर्त है यह शरीर पदार्थ का। भगवान ष्ण की भाषा में अधिभूत इसको कहते हैं और इसके भीतर जब हम और चले तो हमारा मन, चेतना। बड़ी मूर्छित मूर्छित है, बड़ी धीमी धीमी जल रही है लौ। जिसे कहते हैं जैसे धुआं–धुआं है। पहले सोच लो कि इंजन है यह शरीर, तो दूसरा जो है मन वहां पर अब धुंआ ही धुआं है, कुछ स्पष्ट नहीं हैय अर्ध जागृत है, अर्ध मूर्छित कह लो, कुछ साफ–साफ नहीं है। धुआं–धुआं धुंध जैसे कुहासा है, कुछ स्पष्ट नहीं है । भीतर की अग्नि कह लो, तो यहां धुंआ है मन के तल पर और भीतर चौतन्य पर प्योर अग्नि।

चैतन्य उसको भगवान कृष्ण ने कहा अधियज्ञ । पहला है – अधिभूत यह शरीर, दूसरा है – अधिदय जो कि बिल्कुल स्पष्ट नहीं है, अस्पष्ट है, धुआं–धुआं है, कुछ–कुछ शरीर जैसा है पदार्थ जैसा है कुछ–कुछ चेतना जैसा है। वो कह लो कि शरीर और चैतन्य की जो मिलने की जो सीमा रेखा, वहां पर जो ओवरलैपिंग देते हैं, – वहां पर स्मोक पैदा हो रही है। तो यह जो स्थिति है, यहां से हम फिसलते रहते हैं ज्यादातर। हम पदार्थ शरीर की तल पर आ जाते हैं, पदार्थ गत हो जाते हैं। जब शरीर के तल पर आ गए, हम पदार्थ से नाता जोड़ लिए। फिर हमें इसके प्रति जागरूक होना है, इस अधिदय के प्रति जागरूक होना है। यह जो अस्पष्ट, जो कि बार–बार फिसल फिसल जाता है, इसे शरीर की, पदार्थ की, वस्तुओं की ओर इसे ले जाना है चेतना की ओर जहां कि कृष्ण कहते हैं कि यह मैं हूं जो चौतन्य हमारे भीतर विद्यमान है, वह अखंड ज्योति, वह पूरी जलतीहुई अग्नि जिसमें कोई फ्लेम नहीं उसके स्मरण में बार–बार जीना है। लेकिन उसका स्मरण हार्दिक हो।

हार्दिक कैसे हो जाए यह स्मरण?इसकी पूरी प्रोसेस है। हार्दिक ऐसे होगा यह स्मरण यह जानेकि हम हमारे जीवन में किस चीज को मूल्य देते हैं। क्या हम व्यक्ति को मूल्य देते हैं या वस्तुओं को मूल्य देते हैं?अगर हम वस्तु को मूल्य देते हैं तो हम अर्ध मूर्छित को पदार्थ की ओर ले गए, शरीर की ओर ले गए, जो कि अब हम और जड़ हो गए। इसीलिए तो नशे के खिलाफ बात होती है, जब हम नशे में जाते हैं तो यह अर्ध चेतना जो है और गिर जाती है पूरी बेहोश हो जाती है। अभी तो कुछ कुछ होश था अब पूरा बेहोश हो गए। लेकिन एक और उपाय है इसको पूर्ण जागृत करने का, वह उपाय है इस पूर्ण चैतन्य की याद में, इसके प्रेम में, इसके स्मरण में जीने लगे और जब हम पूर्ण जागृत हो जाए तो यह अर्ध चेतना विलुप्त हो जाती है। तो इस अर्ध चेतना से मुक्ति की यात्रा ही अध्यात्म की यात्रा है।

पहली बात तो कैसे हम वस्तुओं के प्रेम से व्यक्तियों के प्रेम में जाएं?व्यक्ति इंपॉर्टेंट हो जाए वस्तु नहीं। इसलिए तो दान का इतना महत्व है, इसलिए तो अपरिग्रह की चर्चा करते हैं। क्यों?क्योंकि वस्तु हमारे लिए इंपॉर्टेंट ना हो जाए व्यक्ति इंपॉर्टेंट हो जाए। हमारा प्रेम वस्तुओं से हटकर व्यक्ति की ओर जाए तो जीवन में जब भी घटनाएं घटे, मौका बहुत बार आता है, हमारे पास हमारे सेवादार होते हैं कोई चीज टूट गई तो वह चीज ज्यादा इंपॉर्टेंट हो जाती है उस व्यक्ति का दिल इंपॉर्टेंट नहीं होता। उसे हम कितना, कितना कुछ कह देते हैं, उसे कोस देते हैं कितना, बहुत कुछ कह देते हैं, कर देते हैं। हमने यह नहीं देखा कि उसका जीवन, हृदय ज्यादा इंपॉर्टेंट है या वह जो चीज थी हमारी जो कि टूट गई वह इंपॉर्टेंट हो गई। वहां पर जागने की जरूरत है कि यह व्यक्ति जीता जागता इसके भीतर ष्ण विराजमान है। वह खड़ा हुआ है हम उसकी अवहेलना करते हैं। तो हमारा प्रेम कैसा होना चाहिए कि हम व्यक्तियों को वस्तु बना देते हैं, उपयोग करते हैं हम व्यक्तियों का। जबकि उल्टा क्या होना चाहिए कि वस्तुओं का उपयोग करना है, व्यक्तियों को प्रेम करना है। हम करते हैं वस्तुओं को प्रेम, व्यक्तियों का उपयोग करते हैं। तो इस प्रेम के प्रति जागरूक होना है। हमारे लिए हमारा प्रेम ऐसा हो जाए कि वस्तु को भी व्यक्तित्व मिल जाए ।हम व्यक्तित्व को वस्तु बना देते हैं, व्यक्ति को वस्तु की तरह ट्रीट करते हैं। इसके लिए कभी दान, कभी ऐसी और सिचुएशन आती है जब चीजें होती है, टूटती हैं तो हम व्यक्ति को इंपॉर्टेंस दें उसके दिल को इंपॉर्टेंस दें।

और दूसरी बात यह मृत्यु के समय जब भगवान ष्ण कहते हैं कि यह स्मरण कैसे बना रहेगा तो जीवन भर का तजुर्बा सबका यह कहता है कि जब हम सोते हैं तो लास्ट हमारा जो नोट रहता है, ख्याल रहता है, विचार रहता है उसी से जागृत होते हैं, उसी ख्याल से, उसी विचार से जागृत होते हैं। सोता हुआ अंतिम विचार सुबह का पहला विचार होता है। और जिसने ऑपरेशन कराया हो कभी, कभी एनेस्थीसिया में गया हो और फिर उसने भी यह अनुभव किया होगा कि एनेस्थीसिया में जाने से पहले जो लास्ट विचार रहता है, आप जब होश में आते हो वह आपका पहला विचार होता है।

मेरे जीवन में मैंने इसे अनुभव किया है मेरा जब ऑपरेशन हो रहा था गॉलब्लैडर का, तो मुझे एक ही उस समय डर था कि एनेस्थीसिया में जाऊंगी तो क्या पता कई बार एनेस्थीसिया से वापस आना

हुआ या ना हुआ तो कहीं मेरा स्मरण खो ना जाए तो मैं उस समय लास्ट मोमेंट तक उस समय एक गीत उतरा जो हम धुनी गाते हैं –ुनवजयआओ पुकारे ओशो प्राणों से प्यारे ओशो–ुनवजय और इसे गुनगुना रही थी और जब एनेस्थीसिया हुआ और फिर उनके स्मरण में थी और फिर एनेस्थीसिया पता ही नहीं एक सेकंड के बाद और फिर जब होश आया तो उस समय मैंने पहले पाया कि यह ओशो का गीत गगूंज रहा है और मेरे मुंह से भी बुदबुदाहट निकल रही है तो नर्स पूछती है कि आपको क्या चाहिए?तो मेरे मुंह से मैंने बोलते हुए सुना कि मुझे ओशो चाहिए, ओशो। तो यह होता है ऐसा कि लास्ट मोमेंट में आप एनेस्थीसिया में जब जो स्मरण बना रहा वही लौटते हुए भी रहेगा।

मृत्यु तो एनेस्थीसिया ही है, एक सर्जिकल सिचुएशन है कि हमारा जो शरीर है उससे आत्मा निकल रही है और दूसरे शरीर के लिए तैयारी की जा रही है तो बीच का जो पीरियड है वह सोने जैसा है। वहां पर बिल्कुल होश नहीं है, बीच के पीरियड में जब तक कि हमें दूसरा शरीर नहीं मिल जाऐ। तो वह जब दूसर ाशरीर मिलेगा तो वैसा ही जन्म होगा जैसा हम लास्ट मोमेंट में लेकर मरे थे। लेकिन लास्ट मोमेंट में हमने सारी जिंदगी में किस चीज को इंपॉर्टेंस दिया वहीं प्रकट होता है तो पूरी जिंदगी का पैटर्न बदलना होगा क्योंकि मृत्यु से तो कोई भी नहीं बच सकता। तो अगले जन्म में मृत्यु की तैयारी नहीं होती जीवन की तैयारी होती है। याद रखना मृत्यु की कोई तैयारी नहीं होती, मृत्यु तो सडन आ जाएगी उसकी कोई तैयारी नहीं। पहली बार ही आएगी ऐसे जीवन में लास्ट ही रहेगी और पहली ही रहेगी। तो उसकी क्या तैयारी कर सकते हैं?उसका कोई रिहर्सल नहीं हो सकता है। जीवन में रिहर्सल कर सकते हैं मौका आता है मिटने मरने का, इंपॉर्टेंस देने का, प्रेम का।

हम किस चीज को इंपॉर्टेंस दे रहे हैं, वह ज्यादा इंपॉर्टेंट है, उसके प्रति जागना जीवन की साधना है। और जैसे हम जागते हैं तो बात यह है कि यह स्मरण जो है हमारे हार्दिक हो यानी सबकॉन्शियस तक चला जाए। सबकॉन्शियस ही प्रकट होता है कभी भी। कोई भी इमरजेंसी सिचुएशन में हमारा सीखा हुआ नहीं हमारे सबकॉन्शियस में जो है वह प्रकट होता है। अचानक कोई दुर्घटना हो जाए तो उस समय दिमाग से नहीं और भीतर की लेयर प्रकट होती है, तो ऐसे मृत्यु के समय हमारा पूरा सबकॉन्शियस सामने आ जाता है। जीवन भर जो हमने साधा था वही साधना सामने आ जाती है वही। उसके प्रति कैसे हमारा जीवन अखंड जागरण से, अखंड स्मरण से भरे। तो किस चीज को हम इंपोर्टेंस दे रहे हैं, हमारे जीवन का केंद्र क्या है, इसके प्रति जागना यही अध्यात्म की साधना है।

ओशो ने हिमालय से पुकारा

Osho Ne Himalaya se Pukara

Contents:

1. Osho ne Himalaya se pukara
2. Chalo dhyan ki ek bagiya lagaye
3. Dhyan ko, prem ko, Haribhajan ko
4. Osho aaye hai firse
5. Peena mana hai

1. ओशो ने हिमालय से पुकारा
2. चलो ध्यान की एक बगीया लगाएं
3. ध्यान को, प्रेम को, हरिभजन को
4. ओशो आए है फिर से
5. पीना मना है

अमेझॉन इंडिया https://www.amazon.in/-/hi

पर उपलब्ध ओशो फ्रैगरेन्स की हिन्दी-साहित्य लिंक

सांस से समाधि की ओर: विज्ञान भैरव तंत्र भाग 1 में 1-28 विधियां

श्रवण से समाधि की ओर: विज्ञान भैरव तंत्र भाग 2 में 29-56 विधियां

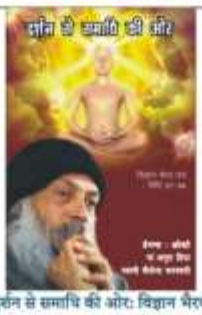

दर्शन से समाधि की ओर: विज्ञान भैरव तंत्र भाग 3 में 57-84 विधियां

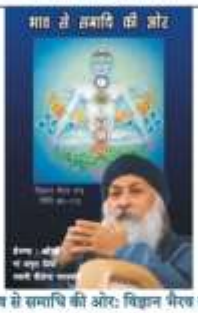

भाव से समाधि की ओर: विज्ञान भैरव तंत्र भाग 4 में 85-112 विधियां

हास्य-फुलझड़ियां: मुल्ला नसरुद्दीन के प्रेरणादायी लतीफे

जीवन - हंसने-हंसाने का अवसर (Hindi Edition)

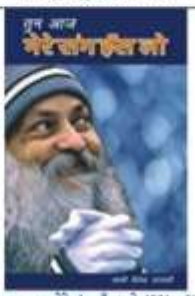

तुम आज मेरे संग हँस लो (Hindi Edition)

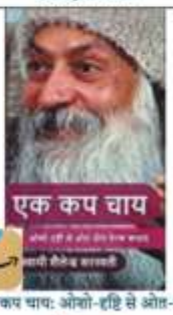

एक कप चाय: ओशो-दृष्टि से ओत-प्रोत प्रेरक कथाएं

मा प्रेम के राही: घाउल फ़कीरों के संग तीर्थ यात्रा - मा अमृत प्रिया

इस स्तंभ में प्रत्येक माह एक कहानी शेयर करेंगे जो हर उम्र वाले बच्चों, युवाओं और बूढ़ों को प्रेरणा देगी

'दुनिया से बुराई मिटाना चाहते हो?तो अच्छे आदमी बनकर देखो और तुम पाओगे कि दुनिया से एक बुरा आदमी कम हो गया है।'- थॉमस कार्लाइल

'यदि आपके पास ऐसा कुछ नहीं है जिसे पैसे से नहीं खरीदा जा सकता तो आप धनी नहीं हैं।'- गार्थ ब्रुक

जीवन के प्रति तीन दृष्टिकोण

—ओशो

मेरे प्रिय आत्मन,

एक नया मंदिर बन रहा था उस मार्ग से जाता हुआ एक यात्री उस नव निर्मित मंदिर को देखने के लिए रुक गया। अनेक मजदूर काम कर रहे थे। अनेक कारीगर काम कर रहे थे। न मालूम कितने पत्थर तोड़े जा रहे थे। एक पत्थर तोड़ने वाले मजदूर के पास वह यात्री रुका और उसने पूछा कि मेरे मित्र, तुम क्या कर रहे हो?उस पत्थर तोड़ते मजदूर ने क्रोध से अपने हथौड़े को रोका और उस यात्री की तरफ देखा और कहा, क्या अंधे हो! दिखाई नहीं पड़ता? मैं पत्थर तोड़ रहा हूं। और वह वापस अपना पत्थर तोड़ने लगा। वह यात्री आगे बढ़ा और उसने एक दूसरे मजदूर को भी पूछा जो पत्थर तोड़ रहा था। उसने भी पूछा, क्या कर रहे हो?उस आदमी ने अत्यंत उदासी से आंखें ऊपर उठाई और कहा, कुछ नहीं कर रहा, रोजी–रोटी कमा रहा हूं। वह वापस फिर अपना पत्थर तोड़ने लगा। वह यात्री और आगे बढ़ा और मंदिर की सीढ़ियों के पास पत्थर तोड़ते तीसरे मजदूर से उसने पूछा, मित्र क्या कर रहे हो? वह आदमी एक गीत गुनगुना रहा था। और पत्थर भी तोड़ रहा था। उसने आंखें ऊपर उठायीं। उसकी आंखों में बड़ी खुशी थी। और वह बड़े आनंद के भाव से बोला, मैं भगवान का मंदिर बना रहा हूं। फिर वह गीत गुनगुनाने लगा और पत्थर तोड़ने लगा।

वह यात्री चकित खड़ा हो गया और उसने कहा कि तीनों लोग पत्थर तोड़ रहे हैं। लेकिन पहला आदमी क्रोध से कहता है कि मैं पत्थर तोड़ रहा हूं, आप अंधे हैं?दिखाई नहीं पड़ता?दूसरा आदमी भी पत्थर तोड़ रहा है, लेकिन वह उदासी से कहता है कि मैं रोजी रोटी कमा रहा हूं। तीसरा आदमी भी पत्थर तोड़ रहा था, लेकिन वह कहता है, आनंद से गीत गाते हुए कि मैं भगवान का मंदिर बना रहा हूं।

ये जो तीन मजदूर थे उस मंदिर को बनाते करीब–करीब हम भी इन तीन तरह के लोग हैं जो जीवन के मंदिर को निर्मित करते हैं। हम सभी जीवन के मंदिर को निर्मित करते हैं, लेकिन कोई जीवन के मंदिर को निर्मित करते समय क्रोध में भरा रहता है, क्योंकि वह पत्थर तोड़ रहा है। कोई उदासी से भरा रहता है क्योंकि वह केवल रोजी–रोटी कमा रहा है। लेकिन कोई आनंद से भर जाता है, क्योंकि वह परमात्मा का मंदिर बना रहा है। जीवन को हम जैसा देखते हैं, जीवन को देखने की हमारी जो चित्त दशा होती है, वह जीवन की हमारी अनुभूति भी बन जाती है। जीवन को देखने की जो हमारी भाव दृष्टि होती है वही हमारे जीवन का अनुभव, जीवन की प्रतीति और जीवन का साक्षात्कार भी बन जाती है। पत्थर तोड़ते हुए से भगवान का मंदिर बनाने की जिसकी दृष्टि है, वह आनंद भर जाएगा। ओर हो सकता है, पत्थर तोड़ते–तोड़ते उसे भगवान का मिलन भी हो जाए। क्योंकि उतनी आनंद की मनस्थिति पत्थर में भी भगवान को खोज लेती है। आनंद के अतिरिक्त परमात्मा के निकट पहुंचने का और कोई द्वार नहीं है। लेकिन जो क्रोध और पीड़ा में काम कर रहा हो, उसे भगवान की मूर्ति में भी सिवाय पत्थर के और कुछ भी नहीं मिल सकता है। क्रोध की दृष्टि पत्थर के अतिरिक्त कुछ भी उपलब्ध नहीं कर पाती है। जो उदास है, जो दुखी है, वह अपनी उदासी और दुख को ही पूरी जीवन में फैला हुआ देख लें तो आश्चर्य नहीं है। हम वही अनुभव करते हैं, जो हम होते हैं। हम वही देख लेते हैं जो हमारी देखने की दृष्टि होती है। जो हमारा अंतर्भाव होता है।

–अमृतद्वार–1

हिंदी में क्वोरा पर पढ़ने के लिए संबंधित लिंक पर क्लिक कीजिए

ओशो के क्रांतिकारी विचार

- क्या हमारी आधुनिक शिक्षा पद्धति इस प्राचीन लोकोक्ति की कसौटी पर खरी उतरती है कि ज्ञान तो वही है जो विमुक्त करे?
- क्या ऋषियों के इस वचन से ओशो सहमत हैं कि 'वसुधैव कुटुंबकम्'?
- कैसे हम सहज बनें, और समता में जीएं?
- क्या ध्यान के अतिरिक्त आनंदित होने का कोई अन्य उपाय नहीं है?
- क्या भविष्य में अध्यात्म के नए-नए रूप प्रगट होंगे?
- ओशो ने किस तरह की शिक्षा प्रणाली लानी चाही जिससे मनुष्य जाति सर्वत्र शांत एवं सुखी हो सके?

CLOSER YOU COME TO YOURSELF, YOU WILL FIND ME!

-Osho

IS IT POSSIBLE TO BE INSIDE WITH YOU?

Whenever you are with yourself you ARE with me, and there is no other way to be with me. So don't create a duality between you and me. Just try to be with yourself, just try to be your withinness, and you are with me!

Language is not capable of saying anything about a non-dual reality. Whatsoever is said in language is bound to be dual. And when you are with me neither you are nor I am. Whenever you are really YOUR BEING you are a nobody, a vast emptiness a whole sky with no boundaries. And then you are not only with yourself you are with the trees, with the clouds, with the mountains, with the sands and with the seas... when you are with yourself you become the whole.

That is the meaning of the Socratic insistence: Know thyself. If you can know yourself you have known all that can be known -- or that which is worth knowing. If you miss yourself you can know much, but all that knowledge is just rubbish. It may hide your ignorance, it cannot dispel it. It may make you knowledgeable but it will not make you understanding, it will not open the inner eye of knowing. You will remain a head person, top heavy, in deep anguish and anxiety.

If you want to be with me, to be with me is not the way. If you want to be with me, to be with yourself is the way. And that is the insistence of all the Buddhas: Know thyself and you will know me, because in knowing yourself you have known all.

But if you try to be with me you will create a duality, and a conflict. Then being with me will become a new sort of attachment. That won't help you, that will really harm you and hinder you. Then I will not be helping you towards transcendence. Rather on the contrary I will become a rock hanging around your neck. You will not achieve through me then, you will be drowned.

But I will not be at fault; that will be your own fault. That has happened to millions of people all over the earth in all the centuries. A Jesus comes and people start being attached to him. The whole point is lost. A Buddha comes and people start their journey to know the Buddha and they become so much obsessed with it that they forget that their own Buddha is just inside themselves. He is not outside.

Buddha. When you are completely within yourself you have known all Christs, all Buddhas, all the Masters that have ever existed, and also all those which will ever exist, because you become one with the whole. Knowing oneself one knows the whole.

The temptation is strong to be attached to a Master, to cling to a Master, to become a shadow; but that won't help, that will be suicidal.

Don't cling to me, I am here to make you free. I am here to help you to be completely, authentically yourself.

If you have accepted me as your Master then you have to understand what I am saying. If you have accepted me as your Master then the only way for you is to know yourself.

Forget about me, move within wards. One day when you will be standing in your own total glory, in the magnificence of your inner being, in the inner light -- there you will find me. Not as a separate being, not as an object, but as the very innermost core of your own self.

It is reported: Buddha was dying, and Anand started weeping and crying -- his oldest disciple, and the most clinging one; for forty years he had been with Buddha and he had not attained, he had not realized himself yet; he loved Buddha too much. If you love too much... remember always, anything that is too much becomes part of the mind; only balance is transcending mind; anything that is too much becomes part of the mind; He loved Buddha too much, the love was not a freedom, it had become a bondage -- anything of the too much is a bondage -- and now that Buddha is dying his whole life is ruined. Anand cries and weeps like a small child whose mother is dying.

And Buddha stops him and says: What, Anand, are you doing? He looks at Buddha with tear-filled eyes and says: Now where will I see you? Where will I seek you? And Buddha laughed and he said: That has been my whole teaching! For forty years that is what I have been telling you, that whenever you want to see me, look within! APPA DEEPO BHAVA; be a light unto yourself. THERE, inside you, you will find me.

If you cling to the outside, it may be a Buddha, a Jesus, but you cling to the world, because the outside is the world. You own innermost interior is the transcendental.

Move within wards and you come closer to me. Come closer to me and you go far from yourself. Try to understand this paradox: If you try to come closer to me you will go further from yourself, and how can you come close to me if you are going further from yourself? Come closer to yourself and you come closer to me, because how is the otherwise possible?

When you come closer to yourself you come closer to me because in the innermost being the centre is one. On the periphery we differ; on the periphery I am an individual, you are an individual; the move within wards brings these peripheral points closer and closer and closer -- and when you exactly reach to the centre of your being there is no duality. The two have disappeared. The TWONESS has disappeared.

- TAO: The Three Treasures, Vol. 4, Chap # 2

सूचनाः ऑनलाइन कार्यक्रम अब शनिवार से शुक्रवार

OSHO FRAGRANCE

Program Schedule

Date	Program	Place	Contact
17-23 Sept	Geeta Dhyan Yagya Adhyaay 14 - Bhag 2	Online	Osho Fragrance Numbers
1-7 Oct	Mahavir Meditation Mahotsav	Online	Osho Fragrance Numbers
8-13 Oct 7th eve to 13th noon	Osho Dhyan Shivir	Neel Farm & Resorts, At Telkampti (Nandikheda), The- Kalmeshwar, Nagpur, MS	9372612005, 9960203081 7755978861, 9834649377 9699487580 ,8010974585
15-20 Oct	Self Realization Retreat	Osho Amritdham Ashram, Devtal, Jabalpur, MP	7828184233 8717961278
15-21 Oct	Self Realization Retreat	Online	Osho Fragrance Numbers
29 Oct-4 Nov	Bhakti Sadhana Shivir	Online	Osho Fragrance Numbers
30 Oct – 3 Nov	Bhakti Sadhana Shivir	Osho Ashram, Sauraha, Chitwan, Nepal	977-9851074126 977-9849992957 977-9841522443
5-Nov	Satsang	Kathmandu, Nepal	977 9841247948, 977 9851019784
7-9 Nov	Buddham Sharanam Gacchami	Lumbini, Nepal	977 9857022506, 977 9857022750
11-15 Nov	Ashtavakra Mahageeta Shivir	Pokhra, Nepal	977 9813676196 (Whatsapp message only)
12-18 Nov	Ashtavakra Mahageeta Shivir	Online	Osho Fragrance Numbers
26 Nov-2 Dec	Cosmic Realization Retreat	Online	Osho Fragrance Numbers
10-16 Dec	OSHO BIRTHDAY CELEBRATION WEEK	ONLINE + Shree Rajneesh Dhyan Mandir	Osho Fragrance Numbers
17-21 Dec	Tao Sadhana Shivir	Osho Madhuban, Champa, Chhattisgarh	7746968159 9575518984
22-25 Dec	Jeene Ki Kalaa	Osho Madhuban, Champa, Chhattisgarh	7746968159 9575518984
24-30 Dec	Nirvaan Retreat	Online	Osho Fragrance Numbers
6-11 Jan	Gehan Sadhana Shivir	Guruharsahai, Punjab	9814587745 9855985180 9914148909
7-13 Jan	Gehan Sadhana Shivir	Online	Osho Fragrance Numbers
21-27 Jan	Osho Loving Awareness Retreat	Online	Osho Fragrance Numbers

www.oshofragrance.org

Osho Fragrance Numbers –

9464247452, 9311806388,9811064442, 9466661255, 9890341020, 8889709895

RajneeshFragrance

oshofragrance

Inauguration of Meditation Centre

On 15th Aug 2022,

Swami Shailendra Saraswati and Maa Amrit Priya inaugurated a meditation centre in Pimpri, Maharashtra.

A discourse was given on the subject - "From Independence to Liberation", followed by Q&A, Meditation, Mala deeksha and celebration.

Swami Tulsi, Swami Rakesh and the entire team of Osho Fragrance, Pimpri put in their best efforts in successfully organizing this event.

ओशो मेडिटेशन कम्यून, हिसार में शिव शक्ति साधना शिविर का शुभारंभ हुआ। स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती जी और माँ अमृत प्रिया जी के सान्निध्य में अनेकों साधक ध्यान की गहराइयों में डूबने के लिए हुए शामिल।

कुछ झांकियां–

अधिक जानकारी व संपर्क सूत्र

Osho fragrance Numbers -
9464247452, 9311806388, 9811064442,
9466661255, 9890341020, 8889709895

Youtube page - Rajneesh Fragrance

Facebook page - Rajneesh Fragrance

Instagram - Osho Fragrance

Twitter - Rajneesh Fragrance

oMeditate App -
Osho Fragrance's Mobile App***

Keep up to date with Osho Fragrance program schedules and live events. Read the latest articles, Osho books, watch the newest videos on various topics, listen to bhajans by Ma Amrit Priya Ji, and participate in guided meditation techniques.

Ask questions to our Masters Swami Shailendra Saraswati and Ma Amrit Priya. Get automatic notifications on key events and daily quotes of Osho wisdom.

Download our official Android App on google play store by searching oMeditate or by clicking on the below link-

Note: The contents are getting updated daily, please keep watching this space for more to come.

Download Osho Hindi & English Books from the link -

contact@oshofragrance.org

ओशो सुगंधा के पिछले अंक...

ओशो सुगंध मासिक ई-पत्रिका जो पढ़ी, देखी और सुनी भी जा सकती है तथा जिसमें समाधि में डूबने, आनंद व भाव-विभोर से भरपूर प्रवचनो और भजनों के ऑडियो-वीडियो लिंक्स दिए गए हैं।

नियमित रुप से ई-पत्रिका प्राप्त करने हेतू, अपने मोबाइल नं. को पंजीकृत करवाने के लिए सामने दिए गए चिह्न को दबाएं।

पत्रिका को खोलने के लिए पुस्तक वाले चिह्न को दबाएं।

अभी तक के सभी अंकों के लिए चिह्न को दबाकर उन्हें देख सकते हैं।